SPEIL दर्पण

No. 4 2015 Stiftet 1988

Et flerkulturelt magasin på hindi og norsk

हिन्दी और नार्वेजीय भाषा का बहुसांस्कृतिक द्वैमासिक

Pris 25 kr

अंक ४ २०१५ स्थापित १९८८

शुभकामनायें। Gratulerer!

नोबेल पुरस्कार के लिए शुभकामनायें। Gratulerer med nobelprisen.

ट्यूनेशिया की चार संस्थाओं श्रमिक संगठन, नियोक्ता संगठन (काम देने वाली संस्था), इस्लामिक और सेकुलर संस्था ने मिलकर ऐसा विकास किया कि ये साथ-साथ कार्य करते हुए देश में प्रजातंत्र लाने का सफल प्रयास कर रहे हैं।

Fire organisasjoner fra arbeidslivet og rettsvesenet sammen med islamistiske og sekulære partier ville - og klarte - å videreutvikle "den arabiske våren" demokratisk og fredelig.

Nesten alle land og Tunisias egen befolkning hyller fredsprisvinnerne - fordi de har vist at ikke-vold, demokratisk mangfold og samarbeid er veien videre.

साहित्य में नोबेल पुरस्कार २०१५ की विजेता स्वेतलाना एलिक्सविच।

Nobelprisvinner i Litteratur, Svetlana Aleksijevitsj.

कैलाश सत्यार्थी जी को हावर्ड का मानवीय पुरस्कार।

Gratulerer Kailash Satyarthi med Harvard-prisen.

मागनुस कार्लसन तीव्र शतरंज में विश्व चैंपियन।

Magnus Carlsen slo Sergei Judin og ble verdensmester i lyn-sjakk.

Foto: Ole Kristian Strøm, VG.

Kulturnytt सांस्कृतिक समाचार

भारतीय-नार्वेजीय सूचना एवं सांस्कृतिक फोरम द्वारा आयोजित लेखक गोष्ठियों के चित्र।
Bilder er fra forfatterkafeene arrangert av Indisk-Norsk Informasjons og Kulturforum.

Bilde er fra Internasjonalt poesifestival på Kampen bydelshus i Oslo.
काम्पेन बीदेल्सहूस, ओस्लो में आयोजित कविता महोत्सव का चित्र।

नार्वे में बालीवुड फिल्म फेस्टिवल के चित्र।
Bilder er fra Bollywood Filmfestival i Norge.

Speil दर्पण

Speil er et flerkulturelt magasin på norsk og hindi. Vi representerer viktige nyheter både fra India og Norge for våre lesere.
Formålet vårt er å øke forståelse og kontakt mellom mennesker og kulturer.
Speil er et talerør for kulturarbeidere i Norge, uansett etnisk bakgrunn. Vi ønsker alle velkommen til å skrive i Speil-दर्पण.. Har du noe å bidra med, spørsmål, ideer eller lignende? Ta kontakt med oss på speil.nett@gmail.com eller suresh@shukla.no

स्पाइल-दर्पण हिन्दी और नार्वेजीय भाषा की एक बहुसांस्कृतिक पत्रिका है। हम भारत और नार्वे के महत्वपूर्ण समाचार देते हैं। इसका उद्देश्य लोगों और संस्कृतियों में आपसी समझ बनाना है चाहे उनकी कोई भी एथनिक पृष्ठभूमि हो। स्पाइल नार्वे में संस्कृतिकर्मियों की आवाज है और हम सभी का स्पाइल में लिखने के लिए स्वागत करते हैं। आप स्पाइल में कोई योगदान देना चाहते है, कोई प्रश्न, विचार या सम्बंधित विषय में कुछ भी? आप संपर्क करें ई-मेल पर:
speil.nett@gmail.com या suresh@shukla.no

Phone: (47) 22 25 51 57

Adresse: Postbox 31, Veitvet 0518, Oslo, NORWAY

Løssalg 25 kr

Bankkonto : 6072 05 14969

I dette nr. इस अंक में

हिन्दी Hindi

• स्तम्भ

सम्पादकीय ५
सम्पादक के नाम पत्र ६

• लेख और समाचार

बेलारूस की स्वेतलाना को साहित्य का नोबेल ७
नोबेल शांति पुरस्कार - ८
इंडियन ब्रिटिश, ब्रिटेन का प्रधानमंत्री होगा - डेविड कैमरन ८
स्पाइल के सम्पादक सम्मानित ६
डॉ. नीलम शर्मा मुख्यमंत्री द्वारा सम्मानित ६
इन्टरनेट के युग में सूचना प्रौद्योगिकी और हिन्दी - अनीता १०
विदेशों में बढ़ते हिन्दी के कदम - रितिका ११
सांस्कृतिक समाचार १२
स्त्री-व्यक्ति-सत्ता का प्रश्न और शांता - डा. अलका पाण्डेय १३
बदलते गाँवों के कथाकार : शिवमूर्ति सरसिज कुमार सिंह (शोधार्थी) १५

• कहानी

गाय के वास्ते - शरद आलोक १६
मुआवजा (अवधी) - डा. ज्ञानवती १७
आम आदमी (लघु कथा) - सुरेशचन्द्र शुक्ल १८
आवाजों की दुनिया - इला प्रसाद १६
स्वयं के घेरे - अलका प्रमोद २२
चाबी का गुड्डा - डा. उषादेवी विजय कोल्हटकर २५
ढाई अक्खर - स्व० हरचरण चावला २६

• व्यंग्य

हाथी की दुम - डा. गिरिराजशरण अग्रवाल २८

• साक्षात्कार

श्रीलाल शुक्ल ३०

• फिल्मी

कंगना रनौट ३२
लताजी से मिलना चाहती हैं सुरीली ३२
विवेक ओबेराय ने उठाया बड़ा कदम ३३

• कवितायें

प्रवीन गुप्ता की दो कवितायें ७
ओस्लो की सड़क पर - शरद आलोक ३४
बदलाव - अनिल जनविजय ३४
मर जाता है वह धीरे-धीरे - पाब्लो नेरूदा अनुवाद प्रतिभा उपाध्याय ३४
प्यार का ऐतबार - अशोक अवस्थी ३४
हिन्दी दिवस और बरसात एक दृश्य अनेक - पूनम उज्ज्वल ३५
गजल और आपकी आवाज हूँ मैं - शिव कुमार बिलगरामी ३५
टूटे स्वार्थ की कारा और स्मृतियों के नाम - अनुपमा पाठक ३६
धर्म - गुरू शर्मा ३६
नफरतों के दाग - ज्ञानवती दीक्षित ३६
एक अजीब दिन - कुंवर नारायण ३६
ख्वाबों के समन्दर - श्वेता दीप्ति ३७
मेरी कविता - गुरू शर्मा ३७
जलजले के बाद - डा. गीता गुप्त ३७

Norsk (Norwegian) नार्वेजीय

• Faste spalter

Leder 5
Leserbrev 6

• Artikler og informasjon

Regjeringen signaliserer økt samarbeid med Afrika 38
Norway backs India's bid for UNSC membership 39
Samene - et urfolk i Norge 40
FN-dagen og FN 70 år
Av Erna Solberg, Statsminister 42
Oppfordrer til rask behandling av søknader 45
Nå kan det søkes om barnefattigdomsmidler 45
Hvordan går det med innvandrere i Oslo 46
Introduksjonsprogram 47
Seljord kommune: speed-dating ble svaret 48

• Dikt

To dikt av Nuri Røsegg 49
To dikt Av Inger Marie Lilleengen
Høsten 49
Godta hverandre 49

Speil दर्पण

सम्पादक Redaktør
सुरेशचन्द्र शुक्ल
Suresh Chandra Shukla

सम्पादक मण्डल: Redaksjon

Harald Burvald
Sangita Shukla Didriksen
Sigrid Marie Refsum
Britt Bekkedal
Maya Bharti

Redaksjon i India
भारत में

Hari Singh Pal (New Delhi)
Kripa Shankar (New Delhi)
Jai Prakash Shukla (Lucknow)
Shivram Pandey (Lucknow)

Våre kilder हमारे श्रोत

India भारत
Rameshvar Mishra, Shanti Niketan
Ubbaidur Rahman Hashmi, New Delhi
Harmahinder Singh Bedi, Amritsar
Nirmala S Mourya, Chennai
Anand Sharma, Lucknow
Vinay Kumar Sharma. Lucknow

Sverige स्वीडेन :
Anil Dogra

Danmark डेनमार्क :
Deshbandhu Charanjiv Kumar

Tyskland जर्मनी :
Dr Indu Prakash Pandey
Dr Ram Prasad Bhatt

Storbritannia ब्रिटेन :
Vijay Rana

Canada कनाडा:
Dr S K Sethi
Manish Kumar Mishra

Sør Afrika दक्षिणी अफ्रीका :
Rambhajan Sitaram

USA यूएसए :
Sher Bahadur Singh
Swarna Mishra

Nepal **नेपाल :**
Shweta Dipti

Leder

Speil gratulerer med Nobels fredspris-2015. Fire organisasjoner fra arbeidslivet og rettsvesenet sammen med islamistiske og sekulære partier ville - og klarte - å videreutvikle "den arabiske våren" demokratisk og fredelig. Nesten alle land og Tunisias egen befolkning hyller fredsprisvinnerne - fordi de har vist at ikke-vold, demokratisk mangfold og samarbeid er veien videre.

Tallrike uskyldige ofre er blitt rammet av terroristenes barbariske handlinger, sier den norske statsministeren Erna Solberg.

Erna Solberg sa videre at vi lar oss ikke skremme, vi står side ved side med franske myndigheter. Mørket skal ikke få senke seg over lysets by.

Speil kondolerer de som døde i terroristenes barbariske handlinger i Paris i Frankrike.

- Suresh Chandra Shukla, Redaktør

SPEIL दर्पण

शुभकामनायें! Gratulerer!

नोबेल पुरस्कार के लिए शुभकामनायें! Gratulerer med nobelprisen.

सम्पादकीय

शान्ति नोबेल पुरस्कार - २०१५ - विजेताओं को बहुत-बहुत बधाई! ट्यूनेशिया की चार संस्थाओं- श्रमिक संगठन, नियोक्ता संगठन (काम देने वाली संस्था), इस्लामिक और सेकुलर संस्था ने मिलकर ऐसा विकास किया कि ये साथ-साथ कार्य करते हुए देश में प्रजातंत्र लाने का सफल प्रयास कर रहे हैं। ट्यूनेशिया के अलावा अधिकतर देश इसकी प्रशंसा कर रहे हैं।

'कई निर्दोष पीडितों को आतंकवादियों द्वारा बर्बरता मारा गया है। हम फ्रांस के अधिकारियों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर खड़े हैं। हम डरे नहीं है। ये अंधियारा कभी भी उजियारे नगर में अन्धेरा नहीं फैला सकता। आतंकववाद के खिलाफ हमारी लड़ाई जारी रहेगी', नार्वे की प्रधानमंत्री श्रीमती अर्ना सूलबर्ग ने अपने निवास पर प्रेस कांफ्रेंस में कहा। आतंकवाद के खिलाफ हमारी लड़ाई जारी रहेगी।'

-सुरेशचन्द्र शुक्ल, सम्पादक

Leserbrev सम्पादक के नाम पत्र

आदरणीय संपादक महोदय,
दसवें विश्व हिंदी सम्मलेन पर केन्द्रित स्पाइल-दर्पण का नवीनतम अंक पढ़ा।
मुझे सुखद आश्चर्य है कि भारत भूमि से दूर यूरोप के नार्वे जैसे देश में कोई व्यक्ति हिंदी की अलख जगाये हुए है। इस पत्रिका को मैंने आद्योपांत पढ़ा है। मैं आपकी हिंदी के प्रति कर्तव्य निष्ठा को नमन करता हूँ कि आपने विदेश में रहते हुए भी हिंदी भाषा के उच्च स्तर को बनाये रखा। इस अंक में दिया गया प्रत्येक लेख, कहानी, कविता, संस्मरण अपने आप में सराहनीय है। आपने यूरोपीय भाषाओं के कुछ शब्दों को भी हिंदी लेखों में समाहित किया है। यह एक सराहनीय कदम है। इससे हिंदी भाषा समृद्ध होगी। मेरी ओर से स्पाइल दर्पण पत्रिका को अनंत शुभकामनाएं।

शिवकुमार 'बिलगरामी'
(संपादक, लोकसभा सचिवालय,
पार्लियामेंट ऑफ इंडिया)

आपकी पत्रिका का अंक देखा। श्लाघ्य प्रयास है। इसे पढ़ कर कई नई बातों का ज्ञान मिला। भविष्य में शासन के विषय पर कुछ लिखना चाहूँगा। मेरी शुभकामनाएं।

डा. मनोज दीक्षित
आचार्य
लखनऊ विश्वविद्यालय, भारत।

सुरेशजी, स्पाइल पत्रिका मिली। स्पाइल पत्रिका से मैं अनेक वर्षों से जुडी हूँ. स्पाइल एक स्तरीय पत्रिका होने के साथ-साथ विदेशों से प्रकाशित पत्रिकाओं में एक विशेष स्थान रखती है. इसमें आप शोधार्थी बच्चों के छोटे-छोटे लेख भी प्रकाशित किया करें। पिछले अंक में सभी लेख अच्छे थे। पाठकों को दीवाली की शुभकामनायें।

प्रो निर्मला एस मौर्य
रजिस्ट्रार चेन्नई, भारत

शुक्ला जी नमस्कार! स्पाइल-दर्पण पत्रिका पढ़ी।

बहुत अच्छी पत्रिका है. बधायी स्वीकारें। भोपाल में विश्व हिन्दी सम्मेलन में आपसे मिलकर प्रसन्नता हुई। इस पत्रिका से जुड़कर अच्छा लगा. आशा है कि आपकी यात्रा अच्छी एवं फलदायक रही होगी। मुझे भोपाल से सीधे दिल्ली जाना पड़ा और उसके बाद गाँव। कल ही वापस जर्मनी पहुँचा हूँ। आशा है कि कुशल से होंगे ! सादर,

राम प्रसाद भट्ट, हमबर्ग, जर्मनी।

प्रिय सम्पादक महोदय, आप नार्वे में हिन्दी पत्रिका स्पाइल-दर्पण के माध्यम से और अपने लेखन से हिन्दी साहित्य में अभूतपूर्व योगदान दे रहे हैं सच्चे मायने में आप साहित्य भूषण हैं. आपको उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा हिन्दी विदेश प्रसार सम्मान दिया गया है, इसके लिए आपको हार्दिक बधायी।

प्रो काली चरण स्नेही, प्रो योगेन्द्र प्रताप सिंह,
प्रो एस.बी. थापा, डा. कृष्णाजी श्रीवास्तव
और डा. टी पी राही।
हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, भारत।

शुक्ला जी, स्पाइल का नया अंक पढ़कर बहुत अच्छा लगा। इसमें यहाँ की खास-खास खबरें और अनेक कार्यक्रमों के बारे में पता चलता है। यह प्रवासियों की सांस्कृतिक आवाज है।

नोशीन इकबाल,
ओस्लो, नार्वे

मैं स्पाइल पत्रिका का नियमित पाठक हूँ. अंक ३-२०१५ में विनोद बब्बर, सुषम बेदी, नीलम शर्मा और सुरेशचन्द्र शुक्ल के लेख बहुत अच्छे हैं जिससे हिन्दी के विकास और विस्तार के बारे में पता चलता है। डा. विजय कुमार राउत, डा. कालीचरण स्नेही, सुरेश बाबर, डा. राजेश श्रीवास्तव के लेख अपने विषय की बहुत जानकारी देते हैं। तेजेन्द्र शर्मा की कहानी तरकीब और अलका भटनागर की कहानी भी बहुत अच्छी है। कवितायें भी बहुरंगी हैं। कुशल सम्पादन के लिए बहुत-बहुत बधायी।

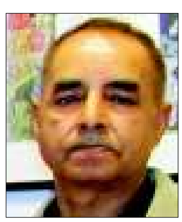

बासदेव भरत, ओस्लो, नार्वे।

आपकी मैगजीन मैं बहुत चाव से पढ़ती हूँ। बाहर मुल्कों में हम लोगों को जोड़ने का काम करती है स्पाइल। यह नार्वे ही नहीं बल्कि पूरे स्कैंडिनेवियाई देशों में पढ़ी जाती है। शुक्ला जी आपको भारत में और नार्वे में इनाम मिला है उसके लिए हमारी ओर से बहुत-बहुत बहुत बधायी।

शाहेदा बेगम,
ओस्लो, नार्वे

स्पाइल-दर्पण पत्रिका को मैं देश-विदेश से निकलने वाली पत्रिकाओं में खास मानता हूँ। इसमें संस्कृति के कई आयामों की जानकारी मिलती है। मसलन नार्वे की सांस्कृतिक गतिविधियाँ, साहित्यिक सामग्री, फिल्मी और खेल आदि। हमारी ओर संपादक मंडल को शुभकामनायें।

फिल्माचार्य आनन्द शर्मा
लखनऊ, भारत

प्रियवर डा. शुक्ल जी

स्पाइल- दर्पण के अंक निरन्तर मिल रहे हैं। आभारी हूँ।
विश्व मंगल की कामना लिए यह पत्रिका विश्ववाणी हिंदी के माध्यम से सामयिक समाज का आईना सिद्ध हो रही है। भारत-नार्वे के रिश्तों को किसी अन्य भाषा के बजाय सीधे हिंदी और नार्वेजियन भाषा के जरिये मजबूती देने का यह उद्यम अनूठा और अनुकरणीय है। पत्रिका के कलेवर और पाठ्य सामग्री में निरन्तर निखार आ रहा है। हाल के अंक में आपने हिंदी जगत के विस्तार और व्याप्ति को प्रभावी ढंग से साकार किया है, एतदर्थ मेरी ओर से बधाइयाँ और स्वस्तिकामनाएँ स्वीकार करें। आपका

प्रो. शैलेन्द्रकुमार शर्मा
आचार्य एवं कुलानुशासक
विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन ४५६०१० (म.प्र.)

बेलारूस की स्वेतलाना को साहित्य का नोबेल पुरस्कार

सुरेशचन्द्र शुक्ल

साहित्य में २०१५ के नोबेल पुरस्कार के लिए बेलारूस की लेखक और पत्रकार स्वेतलाना एलिक्सविच को चुना गया है। इन्हें पूर्व सोवियत यूनियन में लोगों की जिंदगी को अपनी लेखनी के जरिए बेहतरीन ढंग से पेश करने के लिए यह पुरस्कार दिया जाएगा।
२०१५ के नोबेल पुरस्कार उनकी पुस्तक 'उसके पॉलीफोनिक लेखन के लिए, हमारे समय में दुख और साहस के लिए एक स्मारक' के लिए दिया जाएगा।

कौन हैं स्वेतलाना?

स्वेतलाना एलिक्सविच का जन्म ३१ मई १९४८ को सोवियत रूस में हुआ था जो अब उक्रेन में है। इनकी मां उक्रेन की थीं जबकि इनके पिता बेलारूस के सैनिक थे। रुसी भाषा की वह बेलारूस में पत्रकार थीं। उन्होंने दूसरे विश्वयुद्ध से पीड़ित महिलाओं का साक्षात्कार लिया और उसे साहित्य में बड़ी खूबसूरती से पिरोया। इसके अलावा इन्होंने अफगानिस्तान में युद्ध पर भी समाचार लिखे। वह सरकार की आलोचक रही हैं। वे 'ए प्रेयर फॉर चेर्नोबिल' की लेखक भी हैं।
स्वेतलाना ने 'वॉइसेज ऑफ उटोपिया' पुस्तक सीरीज लिखी है। यह सीरीज पूर्व सोवियत यूनियन में लोगों की स्थिति के साथ ही १९८६ में चेर्नोबिल में हुए न्यूक्लियर हादसे के नतीजों का ब्योरा बताती है। इसमें अफगानिस्तान में युद्ध का भी जिक्र है। उन्होंने आम आदमी को अपने साहित्य में स्वर दिया है। दूसरे विश्व युद्ध में लाल सेना में महिलाओं की भूमिका की आलोचनात्मक पुस्तक सोवियत रूस में प्रतिबंधित हुई और स्वेतलाना चर्चा में आईं।

साहित्य में नोबेल के लिए चुनी गईं १४वीं महिला

नार्वेजीय टीवी में उन्हें पुरस्कार के पूर्व ही पसंदीदा सूची में सबसे ऊपर रखा था। इस होड़ में एक नार्वेजीय लेखक यून फोसे भी थे। स्वेतलाना साहित्य में नोबेल पुरस्कार के लिए चुनी गईं १४वीं महिला हैं। उनसे पहले २०१३ में कनाडा की एलिस मुनरो ने साहित्य के लिए नोबल पुरस्कार जीता था। स्टॉकहोम ने पुरस्कार के लिए उनके नाम की घोषणा करते हुए स्वीडिश एकेडमी की अध्यक्ष सारा डैनियस ने कहा, 'उनका काम हमारे दौर के दुख और बहादुरी को दिखाता है।'
नार्वे की अनेक यात्रा कर चुकी स्वेतलाना की कई पुस्तकें नार्वे और स्वीडन में प्रकाशित हो चुकी हैं।

प्रवीन गुप्ता की कवितायें

पहली बारिश

"पहली बारिश ने मुझको याद दिलाया फिर से बचपन,
आज भी मेरी राह देखता होगा मेरे घर का आँगन..
बिन छतरी के घूम रहा हूँ, बारिश में मैं भीग रहा हूँ,
देर से ही पर आया अच्छा, यारों देखों घूम के सावन..
आलू प्याज के गरम पकोड़े, साथ टमाटर की चटनी,
अदरक वाली चाय दोस्तों, माँ ने लाई है मन-भावन..
आज भी आँखे भर जाती है, रोते रोते सो जाती है,
दिल मेरा हर बार ये कहता, बारिश होती कितनी पावन..
मन मेरा हर ये कहता, बचपन होता कितना पावन...

जो पतझड़ हुआ सब वही का वही...

चार दिन ही सही चांदनी तो रही,
फिर वही फासले फिर हकीकत वही,
बारिश तो थमी पर नमी रह गई।
कुछ बातें बची है कहीं अनकही।
कलियाँ खिलकर फूल भी बन गई,
जो पतझड़ हुआ सब वही का वही।
कुछ हमारी थी कुछ उनकी खता,
देख लो चाहे सब खाता बही...

नोबेल शांति पुरस्कार
ट्यूनीशिया के वार्ता मध्यस्थों को नोबेल शांति पुरस्कार

ओस्लो। ट्यूनीशिया के नेशनल डायलाग क्वार्टेट को २०११ की क्रांति के बाद देश में लोकतंत्र निर्माण करने के लिए शुक्रवार को नोबेल शांति पुरस्कार देने की घोषणा की गई। इस क्रांति से अरब देशों में परिवर्तन (लोकतंत्र की) की बयार आई थी।

नोबेल समिति ने कहा कि क्वार्टेट को यह पुरस्कार २०११ के 'जैस्मिन रिवाल्यूशन' के मद्देनजर ट्यूनीशिया में एक बहुलतावादी लोकतंत्र निर्माण में निर्णायक योगदान करने के लिए दिया जा रहा है। समिति ने कहा कि पुरस्कार का उद्देश्य अन्य देशों को इसके लिए प्रोत्साहित करना है कि वे ट्यूनीशिया के नक्शेकदम पर चलें।

इसमें कहा गया है कि नार्वे नोबेल समिति उम्मीद करती है कि इस वर्ष का पुरस्कार ट्यूनीशिया में लोकतंत्र की रक्षा करने में सहायक होगा और यह उन सभी के लिए प्रेरक होगा, जो पश्चिम एशिया, उत्तर अफ्रीका और विश्व के बाकी हिस्सों में शांति और लोकतंत्र को प्रोत्साहित करना चाहते हैं।

क्वार्टेट में उत्तर अफ्रीकी देश के ४ प्रमुख संगठन शामिल हैं जिसमें द ट्यूनीशियन जनरल लेबर यूनियन, द ट्यूनीशियन कंफेडरेशन आफ इंडस्ट्री, ट्रेड एंड हैंडीक्राफ्ट्स, द ट्यूनीशियन ह्यूमन राइट्स लीग और द ट्यूनीशियन आर्डर आफ लायर्स शामिल हैं।

यह संगठन ट्यूनीशियाई समाज के विभिन्न क्षेत्रों एवं मूल्यों का प्रतिनिधित्व करते हैं जिसमें कामकाजी जीवन एवं कल्याण, कानून के शासन के सिद्धांत और मानवाधिकार शामिल हैं।

नोबेल समिति ने कहा कि इस आधार पर क्वार्टेट ने ट्यूनीशियाई में शांतिपूर्ण लोकतांत्रिक विकास को महान नैतिक बल के साथ आगे बढ़ाने की प्रेरक शक्ति एवं एक मध्यस्थ के रूप में अपनी भूमिका का इस्तेमाल किया।

समिति ने कहा कि किसी भी चीज से अधिक, इस पुरस्कार का उद्देश्य ट्यूनीशियाई लोगों को प्रोत्साहन के रूप में है जिन्होंने प्रमुख चुनौतियों के बावजूद एक राष्ट्रीय बिरादरी के लिए जमीनी कार्य किया और समिति को उम्मीद है कि यह अन्य देशों में अपनाने वाला एक उदाहरण का काम करेगा।

पुरस्कार विजेताओं को ये पुरस्कार ओस्लो में १० दिसंबर को आयोजित होने वाले एक कार्यक्रम में प्रदान किए जाएंगे। पुरस्कार निर्माता एल्फ्रेड नोबेल की १० दिसंबर १८९६ को निधन हुआ था।

वो दिन दूर नहीं जब इंडियन ब्रिटिश, ब्रिटेन का प्रधानमंत्री होगा - डेविड कैमरन

लंदन, ब्रिटेन के प्रधानमंत्री डेविड कैमरन ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के साथ शुक्रवार को लंदन में बड़ी संख्या में उपस्थित भारतीय समुदाय को संबोधित करते हुए कहा कि भारतीय समुदाय के लोग आज जिस तरह ब्रिटेन में सांसद और मंत्री बन रहे हैं, ऐसे में वह दिन दूर नहीं जब एक 'इंडियन ब्रिटिश' ब्रिटेन का प्रधानमंत्री होगा।

ब्रिटेन में १५ लाख भारतीय मूल के लोग

पीएम कैमरन ने भारतीय पीएम मोदी की ब्रिटेन यात्रा को ऐतिहासिक बताते हुए कहा कि ब्रिटेन में लगभग १५ लाख भारतीय मूल के लोग हैं जो हमारी सड़कों पर पुलिस के तौर पर सुरक्षा प्रदान करते हुए, अस्पतालों में सेवा प्रदान करते हुए, सभी क्षेत्रों में योगदान देते हुए देखे जा सकते हैं जो अपनी उद्यमिता और कड़ी मेहनत के लिए जाने जाते हैं।

उन्होंने कहा, 'इस साल ब्रिटेन में चुनाव हुए हैं और जो भारत की तरह विशाल तो नहीं हैं, लेकिन पिछले चुनाव की तुलना में भारतीय मूल के लोग कहीं ज्यादा चुनकर आए हैं.. वह दिन दूर नहीं जब एक इंडियन ब्रिटिश, ब्रिटेन का प्रधानमंत्री होगा।'

संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में भारत के स्थायी सदस्य बनने की जरूरत है

प्रधानमंत्री कैमरन ने मोदी की यात्रा को ऐतिहासिक बताते हुए कहा, ''जब संयुक्त राष्ट्र की बात आती है तब आप जानते हैं क्या होने की जरूरत है.. संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में भारत के स्थायी सदस्य बनने की।'

पीएम मोदी के 'अच्छे दिन..' के नारे का जिक्र करते हुए कैमरन ने कहा कि किसी को भरोसा नहीं था कि एक चायवाला विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र का प्रधानमंत्री हो सकता है। लेकिन उन्होंने ऐसा करके दिखाया। अच्छे दिन आने वाले है, उनकी यह जो दृष्टि है, मुझे पूरा विश्वास है कि अच्छे दिन जरूर आएंगे।

स्पाइल के सम्पादक सम्मानित

बियरके -संस्कृति पुरस्कार, ओस्लो

२१ जून को सुरेशचन्द्र शुक्ल को ओस्लो का २०१५ का बियरके -संस्कृति पुरस्कार प्रदान किया गया। सुरेशचन्द्र शुक्ल को यह पुरस्कार उनकी कविता में विभिन्न संस्कृतियों में सेतु स्थापित करने और इंटीग्रेशन के लिए प्रदान किया गया जिसमें एक मशहूर कलाकार की कलाकृति, एक चेक और सम्मानपत्र प्रदान किया गया गया।

प्रथम विश्व हिन्दी सेवा सम्मान

उज्जैन में अक्षर वार्ता की ओर से विदेशों में की जा रही अभूतपूर्व सेवा के लिए सम्पादक सुरेशचन्द्र शुक्ल 'शरद आलोक' को प्रथम विश्व हिन्दी सेवा सम्मान प्रधान संपादक प्रो शैलेन्द्रकुमार शर्मा और संपादक मोहन बैरागी द्वारा कार्यालय में आयोजित समारोह में प्रदान किया गया।

हिन्दी विदेश प्रसार सम्मान

१४ सितम्बर २०१५ को उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान में स्पाइल-दर्पण के सम्पादक सुरेशचन्द्र शुक्ल 'शरद आलोक' को हिन्दी विदेश प्रसार सम्मान से मुख्यमंत्री श्री अखिलेश यादव द्वारा पुरस्कृत किया गया। इस सम्मान समारोह को अंजाम दिला रहे थे संस्थान के निदेशक सुधाकर अदीब और संस्थान के उपाध्यक्ष उदय प्रताप सिंह जहाँ उत्तर प्रदेश विधान सभा के विधानसभा अध्यक्ष और संस्कृति विभाग के सचिव की उपस्थिति महत्वपूर्ण थी।

सुरेशचन्द्र शुक्ल 'शरद आलोक' को राष्ट्रीय गौरव सम्मान

१५ नवम्बर को लखनऊ, उत्तर प्रदेश, लखनऊ में सुरेशचन्द्र शुक्ल 'शरद आलोक' को सुरेशचन्द्र शुक्ल 'शरद आलोक' को राष्ट्रीय गौरव सम्मान दिया जा रहा है। यह सूचना श्री राम प्रकाश वर्मा, सीमापुरी टाइम्स के प्रधान संपादक ने सूचित किया है। सुरेशचन्द्र शुक्ल 'शरद आलोक' और अन्य प्रतिभाओं को राष्ट्रीय गौरव सम्मान चारबाग, लखनऊ में स्थित मशहूर हाल रवीन्द्रालय में दिया जायेगा।

आनन्द शर्मा के निर्देशन में अन्ततः का मंचन

इसी वर्ष फिल्माचार्य आनंद शर्मा के निर्देशन में सुरेशचन्द्र शुक्ल 'शरद आलोक' द्वारा लिखा नाटक अंतर्मन के रास्ते लखनऊ में राय उमानाथ बाली प्रेक्षागृह में मंचित किया गया था। अंततः विदेशों में आज पिता और बेटे के बीच संबंधों की मार्मिक घर-घर की कहानी है। इसी वर्ष के अंत में विदेश में बसे एक युवक और उसके स्वदेश में रह रहे पिता के मध्य संबंधों की मार्मिक, नाटकीय संघर्षगाथा है।

डॉ० नीलम शर्मा धर्मवीर भारती सर्जना पुरस्कार से सम्मानित

हिन्दी के प्रचार प्रसार में निरन्तर रत एवं सम्प्रति आकाशवाणी लखनऊ में सीनियर एनाउन्सर डॉ० नीलम शर्मा को उ०प्र० हिन्दी संस्थान द्वारा हिन्दी दिवस पर उ०प्र० के मा० मुख्यमंत्री श्री अखिलेश यादव द्वारा पत्रकारिता में उनकी कृति 'बी.बी.सी. लन्दन और हिन्दी' पर पत्रकारिता विधा के अन्तर्गत धर्मवीर भारती सर्जना पुरस्कार प्रदान करते हुए बीस हजार रूपये की धनराशि सादर भेंट की गयी। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि अपनी साहित्यिक रचना धर्मिता एवं हिन्दी पत्रकारिता को नया आयाम देने वाली डॉ० नीलम शर्मा को इससे पूर्व भी कई प्रतिष्ठित सम्मान प्राप्त हो चुके हैं। डॉ० शर्मा को हिन्दी के प्रचार प्रसार में उल्लेखनीय योगदान के लिए भारतीय हिन्दी परिषद इलाहाबाद, तमिलनाडु हिन्दी साहित्य अकादमी, चेन्नई एवं अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य कलामंच मुरादाबाद, तथा भाऊराव देवरस सेवा न्यास लखनऊ द्वारा पं० प्रताप नारायण मिश्र कि स्मृति में युवा-साहित्यकार सम्मान २०१५ से अलंकृत किया जा चुका है।

गौरतलब है कि डॉ० नीलम शर्मा व्यक्तिशः नहीं बल्कि सपरिवार हिन्दी पत्रकारिता में सशक्त दखल रखती हैं। इनके पति डॉ० विनय कुमार शर्मा भी एक इण्टरनेशनल रिसर्च जर्नल के प्रधान संपादक हैं जिसका प्रकाशन लखनऊ से हो रहा है।

इन्टरनेट के युग में सूचना प्रौद्योगिकी और हिन्दी

अनीता, बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ

आधुनिक संचार माध्यमों टेलीविजन, रेडियो, फेसबुक, ट्वीटर, ब्लॉग मोबाइल आदि ने हिन्दी को पहले से अधिक लोकप्रिय और जनसुलभ भाषा बना दिया है। आज हिन्दी का महत्व इस बात से भी समझा जा सकता है कि दुनिया में ५० से अधिक देशों में हिन्दी का अध्यापन हो रहा है। इसका मूल कारण यह है कि आज की उपभोक्तावादी संस्कृति में यह बाजार की भाषा बन चुकी है और बाजार में लम्बे समय तक वही रुक सकता है जो जनमानस के अनुकूल हो। देश में युवा कामगारों को देखते हुए सूचना प्रौद्योगिकी और विज्ञान के क्षेत्र में भी हिन्दी ने कदम बढ़ा दिये हैं। इंटरनेट और सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से विदेश में रहने वाले प्रवासी भारतीय आज भी अपनी संस्कृति से जुड़े हुए हैं।

इंटरनेट ने आज पूरी दुनिया को एक सूत्र में पिरो दिया है। प्रारम्भिक दिनों में इंटरनेट पर अंग्रेजी पूरी तरह से हावी रही लेकिन जल्द ही अनेक देशों में अपनी मातृभाषा और जनभाषा के महत्त्व को समझते हुए अंग्रेजी के विकल्प के रूप में अपनी-अपनी भाषाएँ (जापानी, चीनी, जर्मन आदि) विकसित कर ली। ठीक यही चीज हिन्दी के साथ भी लागू हुई। हिन्दी के पोर्टल अब व्यवसायिक तौर पर अत्मनिर्भर हो रहे हैं। कई सारी आईटी कंपनियाँ हिन्दी का समर्थन कर रहीं हैं। वर्तमान समय में यूनिकोड के आने से हिन्दी में काम करना बेहद आसान हो गया है। यूनिकोड इनकोडिंग सिस्टम ने हिन्दी को अंग्रेजी के समान ही प्रबल और सक्षम बना दिया है।

आज प्रिंट मीडिया हो या इलेक्ट्रानिक मीडिया, फिल्मों या सीरियल में ही नहीं अपितु डिस्कवरी, जिओग्राफिकल, हिस्ट्री, कार्टून आदि सभी पर हिन्दी ने अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया है। ये सभी तथ्य हिन्दी के विस्तार में और हिन्दी को राष्ट्रसंघ की भाषा के रूप में शीघ्र ही मान्यता मिलने की ओर इशारा कर रहे हैं। हमारे पास आज हिन्दी को अपनाने वालों की संख्या बहुत बड़ी है। देश की ७० फीसदी से अधिक आबादी हिन्दी समझती और बोलती है। यदि उन तक पहुँचना है तो विश्व की बड़ी से बड़ी कम्पनियों को भारतीय बाजार में आकर हिन्दी को वरीयता देनी ही होगी। साफ्टवेयर क्षेत्र की बड़ी कम्पनियाँ अब नए बाजार की तालाश में हैं क्योंकि अंग्रेजी का बाजार ठहराव बिंदु के निकट है। विकसित देशों में अंग्रेजी भाषी लोग कम्प्यूटर, मोबाइल आदि क्रय कर चुके हैं। बहुराष्ट्रीय कंपनियों को नये बाजार की तालाश में हिन्दुस्तान की ओर आना ही पड़ेगा। चूंकि विकासशील और तीसरी दुनिया के देशों को भारी मात्रा में कम्प्यूटर एवं अन्य अत्याधुनिक उपकरणों की आवश्यकता है। आज हिन्दी बोलने और समझने वाले लोगों की संख्या में बढ़ोत्तरी हो रही है।

इंटरनेट पर हिन्दी की लोकप्रियता बढ़ाने में ब्लागिंग का योगदान भी उल्लेखनीय है। इंटरनेट पर हिन्दी का भविष्य उज्जवल और जाज्वल्यमान है। आज हिन्दी के बहुत से अखबार, पत्र-पत्रिकाएँ अपने अंकों के साथ इंटरनेट पर उपलब्ध हैं। 'दैनिक जागरण', राष्ट्रीय सहारा' 'हंस', 'कथादेश', 'तद्‌भव', 'नया ज्ञानोदय', जैसी बहुत सी पत्र-पत्रिकाएँ इन्टरनेट पर आसानी से उपलब्ध हैं। इसके साथ ही 'अभिव्यक्ति' और 'अनुभूति' नामक वेब पत्रिकाएँ विदेशों में भी हिन्दी की अलख जलाये हुए हैं।

आज इन्टरनेट पर हिन्दी आम से लेकर खास सभी को अपनी ओर आकर्षित कर रही है। इंटरनेट पर हिन्दी की लोकप्रियता में लगातार बढ़ोत्तरी हो रही है। देश के प्रमुख संचार संस्थान भी छात्रों को हिन्दी से जुड़ाव के लिए प्रोत्साहित कर रहे हैं। इंटरनेट ने हिन्दी में नई प्रतिभाओं को सामने लाने में काफी मदद की है और इस पर हिन्दी का संसार तेजी से फैल रहा है क्योंकि हिन्दी में व्यक्ति अपने विचारों को स्पष्ट और सहज रूप से रख पाता है। इंटरनेट पर हिन्दी अनुप्रयोग के कई उदाहरण आपको देखने के लिए मिल जायेंगे। जैसे- भारत में कई सरकारी वेबसाइटें हिन्दी में हैं जिसके माध्यम से नई पीढ़ी को मातृ भाषा से जुड़ने में प्रोत्साहन मिला है। हमें अक्सर देखने को मिलता है कि हर उम्र के लोग हिन्दी भाषा का प्रयोग यूनिकोड रूप में कर रहें हैं, जिससे हिन्दी का क्षेत्र निरन्तर फैल रहा है। कम्प्यूटर पर हिन्दी का प्रयोग बड़ी सहजता के साथ हो रहा है। हिन्दी के पत्र-पत्रिकाओं की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है। आज अनेक हिन्दी साफ्टवेयर बाजार में आसानी से उपलब्ध हैं, जैसे सी-डैक का इज्म ऑफिस, लीप ऑफिस, अक्षर फार विंडोज, सुविंडोज आदि। सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से मशीनी अनुवाद करना बेहद सरल हो गया है। हिन्दी में वेब पेज प्रयोग करने के लिए प्लग इन पैकेज तैयार किया गया है जिसके द्वारा कोई भी व्यक्ति या संस्था अपने वेब पेज आसानी से हिन्दी में प्रकाशित कर सकती है। सूचना प्रौद्योगिकी में हिन्दी भाषा का प्रयोग दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। कई विदेशी कम्पनियाँ जैसे माइक्रोसाफ्ट, याहू, गूगल आदि भी अपनी वेबसाइटों पर हिन्दी को स्थान दे रही हैं। वर्तमान समय में हिन्दी के अनेक शब्दकोश भी उपलब्ध हैं।

इन्टरनेट के युग में हिन्दी प्रौद्योगिकी के साथ मिलकर विश्वव्यापी बन गयी है। यह दक्षिण पूर्व एशिया, चीन, कोरिया, आफ्रीका से वहाँ के चैनलों पर लगातार प्रसारित हो रही है और उन्हें देखने वालों की संख्या निरन्तर बढ़ रही है। वहाँ पर रहने वाले प्रवासी भारतीय अपने मनपसंद टी०वी० सीरियल और फिल्में आसानी से अपनी मातृभाषा में देखने में सक्षम हैं। कई देशों में तो प्रवासी भारतीय अपने बच्चों को हिन्दी में प्रसारित होने वाले कार्यक्रमों के माध्यम से हिन्दी सिखाते हैं। आज एफ०एम० रेडियो इंटरनेट और मोबाइल पर उपलब्ध होने के कारण भी हिन्दी को बढ़ावा मिल रहा है। यह देश-विदेश सभी जगह आसानी से उपलब्ध हाने के कारण भी हिन्दी सुनने वालों की संख्या में दिन-प्रतिदिन बढ़ोत्तरी हो रही है।

आज मल्टीनेशनल कंपनियाँ हिन्दी के प्रचार-प्रसार में लगी हुयी हैं क्योंकि अगर भारतीय बाजार में वो अपना उत्पाद बेचना चाहते हैं तो उन्हें हिन्दी को अपनाना ही पड़ेगा। इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि भारत के अधिकांश क्षेत्रों में हिन्दी बोली और समझी जाती है। आज अधिकतर समाचार चैनल हिन्दी में प्रसारित हो रहे हैं। बॉलीवुड पर भी हिन्दी का दबदबा कायम है और बाहर की भी जितनी फिल्में है वो अनूदित होकर हिन्दी में आ रही हैं क्योंकि भारतीय हिन्दी भाषा के प्रति ही आकर्षित होते हैं। इस कारण से भी हिन्दी के प्रचार को बढ़ावा मिलता है।

शेष पृष्ठ २४ पर...

विदेशों में बढ़ते हिन्दी के कदम

रितिका, बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ

आज भूमण्डलीकरण के इस युग में जब पूरी दुनिया एक गाँव में बदल रही है तो ऐसे समय में भारत के बहुसंख्यक लोगों द्वारा बोली जाने वाली भाषा हिन्दी इससे कैसे अछूती रह सकती है। आज हिन्दी ने अपने कदम भारत से बाहर निकालते हुए विदेशों में अपनी जड़े जमानी शुरू कर दी है जहाँ पर हम इस भाषा का विस्तार कई क्षेत्रों और रूपों में देख सकते हैं। भारत के सत्तर फीसदी से भी अधिक लोगों की हृदय-साम्राज्ञी हिन्दी के प्रचार-प्रसार में आज विश्व स्तर में कई संस्थाएँ अपना योगदान दे रही हैं। इसके साथ ही कुछ देशों में सम्पर्क भाषा के रूप में महत्व दिया जा रहा है। विदेश में हिन्दी के कदमताल की बात की जाय जो इसका सफर भारत के गिरमिटिया मजदूरों के माध्यम से प्रारम्भ होता है। रोजगार की तलाश में पहुँचे गिरमिटिया अपने साथ अपनी भाषा और संस्कृति भी ले गये। अंग्रेज अपनी सुविधा के लिए बिहार, उत्तर प्रदेश, झारखण्ड आदि राज्यों से भारतीयों को इस लोककथा के आधार पर ले गए कि राम ने अपने धनुष से जिस स्वर्ण मृग को मारा, वह मॉरिशस में जाकर गिरा है। उसे वहाँ से लाने के लिए हमें आप लोगों की आवश्यकता है। जिन भारतीयों को अंग्रेज अपने साथ ले गये वे गिरमिटिया कहलाये। गिरमिटिया मजदूर अपने साथ रामायण, महाभारत, पुराण एवं अनेक धार्मिक ग्रंथ भी साथ ले गये जिसके माध्यम से मारीशस में हिन्दी की शुरूआत हुई। धीरे-धीरे इनकी संख्या बढ़ती गयी और ये वहाँ की मुख्य धारा में आ गये। आज मारीशस में भारी संख्या में हिन्दी बोलने वाले लोग हैं। मारीशस के साथ ही फिजी, त्रिनीदाद, सूरीनाम आदि देशों में भी भारी संख्या में हिन्दी बोलने और समझने वाले लोग रहते हैं। आज त्रिनीदाद में हिन्दी बोलने वालों की संख्या ४५ प्रतिशत, सूरीनाम में ४० प्रतिशत और गुयाना में ३० प्रतिशत है।

आज का समय बाजार का है और इसी बाजार के दबाव में अनेक विकसित राष्ट्रों को हिन्दी अपनाने की जरूरत और मजबूरी हो गयी है। हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए विदेशों में अनेक संस्थाएँ और पत्र-पत्रिकाएँ कार्य कर रही हैं। इन संस्थाओं में अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी समिति (सेलम), हिन्दी यू०एस०ए० (न्यू जर्सी), अखिल विश्व हिन्दी समिति (संयुक्त राज्य अमेरिका), विश्व हिन्दी न्यास समिति (न्यूयार्क), हिन्दी साहित्य सभा (टोरंटो), अलबर्टा हिन्दी परिषद (अलबर्टा), हिन्दी परिषद (अण्डमान), कथा यू०के०, हिन्दी परिषद (नीदरलैण्ड) आदि प्रमुख हैं जो उक्त भाषा को समृद्ध करने में अपना योगदान दे रही हैं।

अर्न्तराष्ट्रीय हिन्दी समिति, सेलम की स्थापना १८ अक्टूबर १९८० ई० को हुयी जिसका मुख्य उद्देश्य हिन्दी के ऐसे पाठ्यक्रम तथा कार्यक्रम का निर्माण करना है जिससे अधिकतर लोगों की हिन्दी की प्रति रुचि बढ़े। इसके कार्यक्रमों में भारतीय संस्कृति की झलक देखने को मिलती है। हिन्दी यू०एस०ए० अमेरिका स्थित न्यू जर्सी की धरती पर नई पीढ़ी को हिन्दी के साथ जोड़ने का कार्य कर रही हैं। इसके मुख्य कार्यकर्ता देवेन्द्र सिंह ने अपनी गतिविधियों के द्वारा बच्चों को भारतीय संस्कृति से जोड़ने में सफल रहे हैं। एक आकड़े के अनुसार यह संस्था २५ से अधिक स्कूल चला रही है जिसमें ७०० से अधिक बच्चे प्रवेश ले चुके हैं तथा ५० से अधिक स्वयं सेवक इस कार्य को बढ़ावा देने में पूर्ण सहयोग कर रहे हैं। सप्ताह में एक दिन हिन्दी से सम्बन्धित कार्यक्रम का आयोजन किया जाता है तथा साल में एक बार हिन्दी महोत्सव मनाया जाता है। यहाँ पर सामाजिक व सांस्कृतिक गतिविधियों के साथ तीज-त्योहार के सभी पर्व मनाये जाते हैं। इन संस्थानों के माध्यम से हिन्दी को बल मिल रहा हैं। अन्य भाषाओं के बीच हिन्दी को हर देश में एक पहचान दिलाना तथा हर भारतीयों के बीच हिन्दी को सर्वाधिक लोकप्रिय बनाना है। अमेरिका जैसे देशों में हिन्दी बोलना, लिखना, पढ़ना तथा समझने की क्षमता को विकसित करना है। संयुक्त राज्य अमेरिका में 'अखिल विश्व हिन्दी समिति' को एक ऐसी संस्था के रूप में विकसित किया गया है जहाँ पर अनेक भाषा प्रेमी अपनी भाषा में सेवाएँ प्रदान कर रहे हैं। इनके अलावा 'विश्व हिन्दी न्यास समिति' भी हिन्दी को बढ़ावा दे रही है। इसका मुख्यालय न्यूयार्क में है। यह समिति 'हिन्दी जगत' नामक त्रैमासिक पत्रिका के माध्यम से अनेक भाषा-भाषी को जोड़ने का काम कर रही है। वहाँ पर

अनेक ऐसे व्यक्ति हैं जो हिन्दी जानने और सीखने के लिए अत्यधिक उत्सुक रहते हैं। यह लगभग ८० के आंकड़े को पार कर चुके हैं। हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए समय-समय पर प्रसिद्ध कवियों, साहित्यकारों, भाषा विशेषज्ञों को बुलाकर संगोष्ठी का आयोजन और परिचर्चा की जाती है। नीदरलैण्ड में 'हिन्दी परिषद' की स्थापना १४ सितम्बर १९८३ में की गयी थी। इस संस्था ने हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए सामाजिक व सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन कर अपना योगदान दिया है। 'हिन्दी साहित्य सभा' टोरन्टों की स्थापना १९६७ में हुयी। तब से लेकर आज तक इस संस्था ने हिन्दी के प्रसार में अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये। हिन्दी को बढ़ावा देने के लिए इस संस्था ने अनेक कार्यक्रमों के आयोजनों के साथ ही पुस्तकें भी प्रकाशित करवायी। वर्तमान समय यह संस्था टोरन्टो में ही नहीं बल्कि वहाँ से बाहर भी हिन्दी को प्रचारित एवं प्रसारित कर रही है। 'अल्बर्टा हिन्दी परिषद' की स्थापना १९८५ में अल्बर्टा में स्थित हिन्दू सांस्कृतिक संस्था के प्रांगण में हुआ था। इस संस्था की स्थापना के साथ ही अल्बर्टा में हिन्दी को बढ़ावा मिलने लगा। अल्बर्टा में हमारी आने वाली पीढ़ी हिन्दी भाषा से वंचित न रह जाय इसलिए इसने हिन्दी को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इस संस्था के द्वारा भाषा की कक्षाएँ नियमित एवं सुचारु रूप से चलायी जा रही हैं। इसमें १५ विद्यार्थियों से शिक्षण कार्य प्रारम्भ हुआ था और आज यहाँ प्रतिवर्ष ८० से अधिक छात्र हिन्दी सीखते हैं। भाषा के माध्यम से संस्कृति संवर्धन हेतु प्रत्येक साल सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय कार्यक्रमों का आयोजन करता है जिसमें भारत के ही विभिन्न प्रान्तों के लोग सम्मिलित होते हैं।

नेपाल के अधिकतर क्षेत्रों में हिन्दी स्थानीय भाषा की तरह ही बोली जाती है। यहाँ के अधिकतर लोग हिन्दी बोल या समझ सकते हैं। इसके अलावा यहाँ हिन्दी

का विकास एक बोल-चाल की भाषा के रूप में भी हो रहा है। पं० दीपनारायण मिश्र ने १६६३ में 'नेपाल हिन्दी साहित्य परिषद' की स्थापना की जो हिन्दी के विकास के लिए आज भी काम कर रही है। नेपाल की अधिकांश भाषाएँ देवनागरी लिपि का ही प्रयोग करती हैं इसलिए सभी भाषाओं के बीच मधुर संबंध बनाने की जरूरत है। भविष्य में नेपाली भाषा के साहित्य को हिन्दी भाषा में तथा हिन्दी भाषा के साहित्य को नेपाली भाषा में अनुवाद की आवश्यकता है। हिन्दी भाषा के माध्यम से देश की संस्कृति को सुरक्षित करने का प्रयत्न करने में यह अग्रणी संस्था है। 'हिन्दी समाज' सिडनी में हिन्दी को बढ़ावा देने के लिए अग्रसर है। इस संस्था के माध्यम से यहाँ कुछ वर्षों में साहित्यिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों के द्वारा हिन्दी को लोगों के समक्ष लाने का प्रयत्न किया जा रहा है। विदेशों के लोग हिन्दी सीखकर भारत के साथ व्यापार में सुविधा हो रही है जो परस्पर सहयोग को बढ़ावा देने के लिए जरूरी है। विदेशों में हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए ई-पत्रिकाओं का भी बोल-बाला है जो आज भूमण्डलीकरण और इन्टरनेट के युग में पाठकों को आसानी से उपलब्ध हो जाती हैं। ई-पत्रिकाओं में पूर्णिमा वर्मन द्वारा प्रकाशित 'अभिव्यक्ति' का महत्त्वपूर्ण स्थान है। त्रिनीदाद में 'ज्योति' नाम की मासिक पत्रिका और 'कोहिनूर' अखबार नामक एक दैनिक पत्रिका १६६८ ई० में निकाली गयी। अन्तराष्ट्रीय हिन्दी समिति द्वारा प्रकाशित 'विश्वा', 'सौरव', 'विश्व विवके' 'अमेरिकी रिर्पोटर' आदि पत्रिकाओं ने हिन्दी को वैश्विक स्तर पर प्रतिष्ठित करने में महती भूमिका अदा की है। उपरोक्त विवेचन के बाद अन्ततः कहा जा सकता है कि हिन्दी अपनी भाषिक विशेषताओं के कारण सारे विश्व में लोकप्रिय होती जा रही है और इसका विस्तार दिन-प्रतिदिन बढ़ता चला जा रहा है। हिन्दी को विश्व भर में लोकप्रिय बनाने के लिए अनेक संस्थाएँ निरन्तर कार्यरत हैं । हम जानते हैं कि यह सफर चुनौतियों से भरा है लेकिन चुनौतियों का व्यवहारिक समाधान ढूंढना और हिन्दी को समय सापेक्ष गतिशीलता एवं व्यापकता प्रदान करने के लिए हमें अन्य देशों की भाषाओं को भी महत्त्व देना होगा। इस कार्य में हमारे विश्वविद्यालयों और वहाँ के शिक्षकों को आगे आने की आवश्यकता है जिससे छात्रों की विदेशी भाषाओं के प्रति रुचि बढ़ सके।

सांस्कृतिक समाचार

ओस्लो में नयी सरकार बनी

चित्र में स्पाइल संपादक सुरेशचन्द्र शुक्ल
मारिआने बोरगेन को बधाई देते हुए

मारिआने बोरगेन और खामशाजिनी गुनारत्नम को बधायी । ओस्लो पार्लियामेंट की सरकार का गठन २१ अक्टूबर को हो गया। ओस्लो नगर पार्लियामेंट में मेयर मारिआने बोरगेन Marianne Borgen और डिप्टी मेयर २७ वर्षीय खामशाजिनी गुनारत्नम Khamshajiy Gunaratnam को उनके चुने जाने पर बधायी दी. ओस्लो सरकार में पांच महिला मंत्री और तीन पुरुष मंत्री हैं और ओस्लो सरकार के मुखिया युहानसेन Raymond Johansen बने हैं। भारतीय मूल की प्रबलीन कौर ओस्लो में और बलराज सिंह अरबाइदर (लेबर) पार्टी Ap की तरफ से द्रोबाक में सदस्य चुने गए हैं। इसके अलावा फ्रेम स्क्रितस पार्टी (Frp) से ओमवीर उपाध्याय स्थानीय स्टोवनेर बीदेल, ओस्लो में सदस्य और ओस्लो में वारा सदस्य चुने गए हैं उनके साथ उनकी साथी पार्टी होइरे H पार्टी से वारा सदस्य करमजीत ग्रेवाल चुने गये हैं।

ओस्लो में मनाई गयी गांधी जयन्ती

पिछली सदी के महामानव विश्व शान्तिदूत महात्मा गांधी जी का जन्मदिन दो अक्टूबर २०१५ को धूमधाम से ओस्लो में मनाया गया। इस कार्यक्रम में भारतीय दूतावास के सचिव श्री एन पुनप्पन जी ने गांधी जी के जीवन से मार्टिन लूथर किंग, नेलसन मंडेला, लेक वालेसा, दलाई लामा, विशप देशमंद टूटू और अन्य के रोचक संस्मरणों को सुनाया जिसमें उन्होने गांधी जी के सिद्धांतों अहिंसा, सत्याग्रह और सत्य से सीखने और उन्हें अपना आदर्श मानने की बात की। कार्यक्रम में वक्तव्य, कवितापाठ, संगीत और गीतों के साथ संपन्न हुआ। कार्यक्रम का आयोजन भारतीय-नार्वेजीय सूचना एवं सांस्कृतिक फोरम ने किया था। सुरेशचन्द्र शुक्ल ने बताया कि भारतीय -नार्वेजीय सूचना एवं सांस्कृतिक फोरम की स्थापना का पहला कार्यक्रम २ अक्टूबर १६८८ को संत हावर्ड चर्च, ओस्लो में आयोजित किया गया था जिसमें ओस्लो के तत्कालीन महापौर अलबर्ट नोर्डिंगन, नार्वे की उप विदेशमंत्री, भारत के राजदूत महामहिम रंगराजन, प्रथम सचिव आर वी पण्डित और लेखकों ने हिस्सा लिया था और गांधी जी पर दिखाया गया वृत्तचित्र एक यादगार चित्र था। सुरेशचन्द्र शुक्ल ने महान गांधीवादियों से मिलने की बात कही जो उनके जीवन के न भूलने वाले क्षणों में हैं। सुरेशचन्द्र शुक्ल बताते हैं कि नेलसन मंडेला से उनकी भेंट ओस्लो के दोमचर्च में सन १६६३ में हुई थी। उसके पहले दलाई लामा से १६८६ में एक साक्षात्कार भी लिया था जो ओस्लो के स्थानीय पात्र ओस्लो ओयस्त Oslo-øst में प्रकाशित हुआ था। लेक वालेसा, राष्ट्रपति ओबामा, मिखाइल गर्वाचोव, कैलाश सत्यार्थी आदि को नोबेल वक्तव्य देते हुए सुना था जो जिनके आदर्श महात्मा गांधी रहे हैं।

संयुक्त राष्ट्रसंघ दिवस FN-dag धूमधाम से संपन्न

भारतीय नार्वेजीय सूचना एवं सांस्कृतिक फोरम की ओर से वाइतवेत सेंटर ओस्ला में संयुक्त राष्ट्र संघ दिवस FN-dag मनाया गया। कार्यक्रम में मुख्य अतिथि थे भारतीय दूतावास में सचिव श्री एन चारी ने शुभकामनाएं दीं और लेखकों को पुष्प दिए। इस अवसर पर श्री एन चारी जी को शाल ओढ़ाकर और पुष्पगुच्छ से सम्मानित किया गया। कार्यक्रम में कविता पढ़ने वालों में इंगेर मारिये लिल्लेएंगेन, रीतिका, नूरी रोयसेग और सुरेशचन्द्र शुक्ल ने अपनी कवितायें पढ़ीं और संयुक्त राष्ट्र संघ दिवस को भाईचारे वाला दिवस बताया।

स्त्री-व्यक्ति-सत्ता का प्रश्न और शांता

डॉ० अलका पाण्डेय, हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय

किसी भी रचना का जन्म शून्य में नहीं होता। रचना और रचनाकार को उनकी सामाजिक, राजनीतिक परिस्थितियों के संदर्भ में ही समझा जा सकता है। अच्छे कवि या रचनाकार अपने समय के सवालों से जूझते हैं और वे समय के सम्मुख कई सवालों को उपस्थित भी करते हैं।

डॉ० जगदीश गुप्त जी निश्चय ही हमारी साहित्यिक विरासत के विशिष्ट स्तम्भ हैं, वह अपने कुछ खास दार्शनिक रूझानों के बावजूद; समय समाज में रचनात्मक आवाजाही करते हैं और इस प्रक्रिया में भारतीय समाज की एक स्त्री प्रकट होती है उनकी कृति 'शांता' के रूप में।

डॉ० जगदीश गुप्त जी की मानव हृदय में गहरी पैठ थी और वे भली प्रकार जानते थे कि कथा के मार्मिक स्थल कौन से हैं इसीलिए उन्होंने अपनी भावाभिव्यक्ति द्वारा मानव व्यक्तित्व के प्रति अधिक आत्मविश्वास पैदा करने का स्तुत्य प्रयास किया। साथ ही 'शान्ता' के देवी और दुष्टा के परस्पर विरोधी रूप के अन्तराल को भरने का प्रयास उसी तरह किया जैसे मैथिलीशरण गुप्त ने 'कैकेयी' का परिसंस्कार अपनी नवीन कल्पना के साथ साकेत में किया था।

यद्यपि गुप्त जी से पूर्व भी 'शान्ता' से सम्बन्धित जानकारियां मिलती हैं। 'श्रृंगवेरपुरगौरवम्' में प्रो० संगमलाल पाण्डेय ने शान्ता के बारे में दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सांस्कृतिक दृष्टि से लिखा। 'उत्तररामचरितम' में भवभूति ने शान्ता और उनके प्रति ऋष्यशृंग के सन्दर्भ में परिचय दिया हैः-

''कन्यां दशरथो राजा शान्तां नाम व्यजीजनत
अपव्यकृतिकां राज्ञे रोमपादाय तां ददौ।''[1]

महाराज दशरथ को शान्ता नाम की एक कन्या उत्पन्न हुई थी, जिसे उन्होंने राजा रोमपाद को दत्तकपुत्री के रूप में दे दिया। विभाण्डक ऋषि के पुत्र ऋष्यशृंग ने शान्ता से विवाह किया। ऋष्यशृंग ने बारह वर्षों में समाप्त होने वाला एक यज्ञ प्रारम्भ किया है। उन्हीं के अनुरोध से लगभग पूरे दिनों के लिए गर्भवती जानकी को छोड़कर घर के सभी बड़े लोग वशिष्ठ तथा कौशल्या आदि कहीं चले गये हैं।

'साकेत' के नवम सर्ग में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने एक छंद में भवभूति की प्रेरणा से एक अद्भुत कल्पना की- दोहद की जो कालिदास की धारणा के अनुसार है। इस प्रसंग से 'शान्ता' के प्रति गुप्त जी का आदरभाव 'सती' शब्द से विशेषतः प्रकट होता है।[2] ननद-भाभी का लोकप्रचलित विनोद भी इसके मूल में है। लोकसाहित्य में भी शान्ता का उल्लेख सीता की ननद के रूप में मिलता है। साथ ही डॉ० कामिल बुल्के ने अपने कोशात्मक शोधप्रबन्ध 'रामकथा' लिखकर परोक्ष रूप से सहायता की। लोहिया जी ने रामकथा को निजी दृष्टि से देखा तो इस घटना को 'ननद की नटखटी' कहकर भारतीय लोकचेतना का सम्मान किया।

'शान्ता' राम की बड़ी बहन होने के बाद भी रचनाकारों के बीच उपेक्षित रहीं, कुछ लोगों ने शान्ता के सम्बन्ध में लिखने का प्रयास तो अवश्य किया परन्तु शान्ता को सजीव रूप में प्रस्तुत करने का सार्थक प्रयास जगदीश गुप्त ने किया। उन्होंने अपनी अत्यंत आपातकालीन स्थिति में शान्ता का नवपरिष्कार करके नयी कल्पना की है। जिस प्रकार मैथिलीशरण गुप्त ने कैकेयी को एक उदात्त चरित्र से विभूषित स्नेहमयी माता के रूप में प्रस्तुत किया है; उसी प्रकार जगदीश गुप्त जी ने राम की बहन शान्ता का नया परिष्कार कर, एक उत्कृष्ट मौलिक कल्पना की है।

उन्होंने 'शान्ता' के माध्यम से स्त्रियों के समकालीन प्रश्नों को शिद्दत के साथ घेरने का प्रयास किया है। आज स्त्री-मुक्ति अभियानों और आंदोलनों के रूप में रचना और विचार की जमीन से आगे व्यवहार के स्तर पर हमारे सामाजिक जीवन में बहुत कुछ घटित हो रहा है। प्रारम्भ से अब तक व्यक्ति जीवन, पारिवारिक जीवन और सामाजिक जीवन में घटित ऐसे उदाहरण इतिहास के आइने में चमकते दमकते हमारे सामने है। अपनी जीवन-स्थितियों के प्रति ख्यात स्त्रियों के मौन-मुखर प्रतिरोध के उदाहरण, जो आगे के मुक्ति अभियानों की प्रेरणा बने हैं उनकी दिशा में निर्धारक बने हैं। ऐसे ही प्रश्नों को लेकर राम की बहन शान्ता भी डॉ० जगदीश गुप्त के इस काव्य में हमारे सम्मुख उपस्थित होती है।

शान्ता के जीवन की यह विडम्बना है कि उसे अपनों ने ही दरकिनार कर दिया। उसके मन में स्वाभिमान और अस्तित्व की महत्ता समझने और अर्जित करने का संघर्षमय स्वप्न दर्शाया गया है। वह जन्म से ही अपने परिजनों द्वारा ठुकराई गई फिर भी एक पुत्री के त्याग की महानता ही है कि वह जिनके द्वारा त्याग दी गई थी। उन्हीं परिजनों के हित के लिए अपने पति को यज्ञ में जाने के लिए तैयार कर लेती है। शान्ता का दुख उसी के शब्दों में-

गोद दिया या बोझ उतारा
पीछे मुड़कर नहीं निहारा
निर्वासन क्यों दिया अवध ने?
क्रूर कर्म क्यों किया अवध ने?
बेटी-बेटे में अन्तर क्यों?
उसे पास रखने में डर क्यों?[3]
क्या था मेरा दोष,
मात्र यह, मैं कन्या थी।
वह भी पहली कैसे बनती
उत्तराधिकारी, वन्या थी'[4]

शान्ता के मन में आक्रोश, बेचैनी है क्योंकि उसे अपनों ने त्यागा है। पितृसत्तात्मक समाज में अपनों द्वारा उपेक्षा की शिकार शान्ता की पीड़ा, हमारी सामाजिक व्यवस्था की स्थितियों की जांच-पड़ताल के लिए अपने नैतिक अधिकारों के

लिए जवाब मांगती है कि क्यों उसे कन्या होने की इतनी भारी कीमत चुकानी पड़ी। वह अपने खोए अस्तित्व को पाना चाहती है-

पिता विमुख मैं वह कन्या हूँ
जंगल मैं फिरती वन्या हूं
कोई पूछे पिता कहां थे
राजकाज था, यहां वहां थे
मुझे सदा ही वन्या रहना
याद न आई कभी किसी को
यह अपशकुनी छाया।’[५]

जिसने भी दुनिया बनाई होगी तो यह सोचकर तो कभी नहीं बनाई होगी कि इसमें पुरुष श्रेष्ठ होगा और स्त्री हीन। न केवल स्त्री बल्कि पुरुष को जन्म देने वाली एक स्त्री ही होती है फिर क्यों समाज में इसका जन्म कभी खुशखबरी नहीं बन पाता।

धर्म ने, समाज ने, साहित्य ने, न जाने कितने अध्याय स्त्री पर लिख डाले। उसके भोग्या रूप के वर्णन से, उसके विश्लेषण से साहित्य भरा पड़ा है। सदियों से वह दूसरों की सुनती आ रही है। पर उसकी बातें- ‘दुखवा मैं कासे कहूं मोरी सजनी’ बनकर रह गई है। आज के संदर्भ में कहूं तो कई उदास रंगों में लिपटी मोनालिसा की दर्द भरी मुस्कान की पीड़ा शताब्दियों से उसके अलावा और दूसरा कहां समझ पाया। उसका दर्द, अपने मिज़ाज को बदलता, नये अंदाज में ढलता, पीढ़ी दर पीढ़ी हमारी रगों में खून के साथ बहता चला आ रहा है। आखिर हम भी क्या करें-दिल ही तो है, न संग ओ रिवश्त
दर्द से भर न आए क्यों
रोयेंगे हम हज़ार बार, कोई हमें सताये क्यों?’

जिस स्त्री मुक्ति के यज्ञ प्रश्न की बात अभी हमने की है वह अपनी समग्रता में अभी भी हमारे समक्ष विद्यमान है। स्त्री मुक्ति का मुद्दा यूरोपिया ही रहेगा या हमारे सामाजिक जीवन का यथार्थ भी बनेगा। शान्ता इस प्रश्न को राम के समक्ष उठाती है-

‘नारी से नर उपजा या नर से नारी
संदेह रहित उत्तर, है संकट भारी,
तुम पुरुष भाव से ही क्यों जीवन देखो
नारी केन्द्रित रचना-विधान भी लेखो।
यह जगत अर्द्ध नारीश्वर होकर छाया
है इसी रूप में अर्द्ध पुरुषमय माया
सीता निर्वासन करके राम अधूरा
मैं शान्ता हूँ, चाहती राम को पूरा।’[६]

स्त्री से जुड़े मौजूदा सारे प्रयासों के पीछे निहित और उनकी दिशा तय करती सोच के आयातित और देशज पहलुओं में विद्यमान असंगतियों से असहमत होने के बावजूद मेरा दृष्टिकोण सदा सकारात्मक रहा है चाहे वे स्त्री मुक्ति के आंदोलन हों, या विमर्श हों, अथवा रचनात्मक उपक्रम। कुछ बातें, कुछ विचार, कुछ सवाल, कुछ जिज्ञासाएं तथा कभी-कभी आशंकाएं जरूर मन में उठती रही हैं। शांता ने भी ऐसे प्रश्न उठाये-

नारी की भावना
जानती केवल नारी
पुरुष चाहता
रहे सदा बनकर अधिकारी
स्वयं आपसे पूछ रही मैं
निज सीता से हुई विरति क्यों?
नहीं आपके वाम पार्श्व में
अर्धांगिनी हो, समासीन वह?
ऐसा क्यों है?
ऐसा क्यों है?
गूंज रही थी अन्तःपुर में
ऋषि पत्नी शांता की वाणी
राम मौन थे और निरुत्तर
अन्तर्मन की पीड़ा ही था उनका उत्तर।’[७]

स्त्री मुक्ति अथवा स्त्री विमर्श का तात्पर्य पुरुष दर्प और पुरुष वर्चस्व तथा पुरुष मानस की विकृत सोच से सभी की मुक्ति है, ना कि स्त्री-पुरुष सम्बन्धों से उसकी मुक्ति। संसार और समाज को यदि बने रहना है, अग्रसर होना है, तो स्त्री विहीन संसार या पुरुष विहीन संसार का समाधान इनमें नहीं है। स्त्री-पुरुष संबंध है, तभी संसार है। अतः राम के साथ ही सीता का वजूद है और सीता के साथ ही राम का, फिर क्यों सीता की अग्नि परीक्षा की जाये-

‘जिस लक्ष्मण से अग्नि मंगाकर
किया सतीत्व-परीक्षण
वही उसे ले जाये वन में
बिना बताये कारण
उसको भी तो लग सकती थी
जनभावना अनैसी
परम पुनीता सीता की
फिर अग्निपरीक्षा कैसी?
ऐसे क्रूर कर्म का तुमने
उसे बनाया साधन?
कैसा वत्सल भाव तुम्हारा
यह कैसा आराधन?’[८]

मुख्य समस्या स्त्री-पुरुष संबंधों में समरसता की है। आज के समाज में, सामाजिक संरचना क्षत-विक्षत हो चुकी है। स्त्री-पुरुष अपनी अस्मिता और वजूद को बनाए और बचाए रखते हुए एक दूसरे के वजूद का सम्मान करते हुए, समरस, सहभागिता, संबंध कैसे कायम रखें, यह प्रश्न मुंह उठाये खड़ा है-

दोनों ही अन्योन्याश्रित हैं
इनमें पूर्वापर-क्रम कैसा
इनकी सृष्टि सदा ही युगपत
यही सत्य है, विभ्रय कैसा’[९]

प्रकृति की लय भी न टूटे और स्त्री-पुरुष संबंध विषम, एक पक्षीय भी न रहें। स्त्री-पुरुष एक दूसरे की आकांक्षाओं और मनोभावों का सम्मान करें। वर्चस्व नहीं, सहभागिता हो। स्त्री मुक्ति की सही दिशाएं यही अथवा ऐसी ही हो सकती है-

ताडंव हो या लास्य नृत्य ने
दोनों में सर्वांग समाहित
दोनों ही रचते मानव-मन
लय से पूरित रूप प्रवाहित।

‘शांता’ के माध्यम से डॉ० जगदीश गुप्त ने बताया है कि स्त्री मुक्ति की दिशाएं हमें अपनी जमीन पर, अपने सामाजिक-सांस्कृतिक मिथ्या के उन पहलुओं पर विचार करते हुए ही खोजनी और तय करनी होगी, क्योंकि विद्यमान सामाजिक संरचना तथा उसे संभव बनाने वाली सोच के घटाटोप में गुप्त जी जैसे रचनाकार आज तक प्रतिरोध के स्फुलिंग को जीवित रखे हुए हैं। हमें उसे आगे बढ़ाना होगा।

संदर्भ सूची

१. उत्तर रामचरित - भवभूति
२. शान्ता - डॉ० जगदीश गुप्त, भूमिका
३. शान्ता - डॉ० जगदीश गुप्त, पृ० ४०
४. उक्त, पृ० २
५. उक्त, पृ० १७
६. उक्त, पृ० ६६
७. उक्त, पृ० ८७
८. उक्त, पृ० ६३
९. उक्त, पृ० १००

बदलते गाँवों के कथाकार : शिवमूर्ति

सरसिज कुमार सिंह (शोधार्थी)

आज हिन्दी कहानी मुख्य रूप से शहरी मध्य वर्ग की कहानी बनकर रह गयी है जबकि इसकी विकास यात्रा की शुरूवात गाँवों से हुई थी। प्रेमचन्द ने हिन्दी कहानी की बुनियाद में गाँवों को ही रखा था। तब हिन्दी कथा साहित्य की पहचान प्रेमचन्द और गाँवों से ही होती थी। लेकिन आजादी के बाद स्थिति बदल सी गयी। नयी कहानी के दौर में ग्राम कथा बनाम नगर कथा का विवाद भी कुछ दिन चला। फणीश्वरनाथ रेणु, भैरव प्रसाद गुप्त, मार्कण्डेय, शिव प्रसाद सिंह ने गाँवों के सुख-दुख उम्मीदों और टूटन को लेकर ढेर सारी कहानियाँ लिखी, बावजूद इसके कहा जा सकता है कि साठ के बाद हिन्दी कहानी की मुख्य धारा से गाँव और गाँव का जीवन लगभग छूटता गया है। आज हिन्दी कहानी की मुख्यधारा मूलतः शहरी मध्यवर्ग या उपभोक्ता वर्ग तक सिमट कर रह गयी है तब इस परिदृश्य के भीतर शिवमूर्ति का होना एक बड़े अर्थ का संकेत करता है।

शिवमूर्ति अपनी सरल-सहज भाषा और गंवई माटी से गहरे जुड़े होने के कारण समकालीन कथाकारों में अलग पहचान रखते हैं। जन सामान्य का संघर्ष एवं ग्राम्य प्रकृति इनकी कहानी का मुख्य प्रतिपाद्य है। स्वतंत्रतापूर्व प्रेमचन्द की रचनाओं में भारतीय गाँवों की जो तस्वीर नजर आती है, कहीं न कहीं स्वतंत्रता के बाद वही स्थिति रेणु के साहित्य में भी दिखायी देती है। परन्तु यह किसी यूटोपिया के रूप में नहीं कहा जा रहा है बल्कि इसका भी साक्ष्य है।

'मैलाआँचल' के माध्यम से रेणु न केवल गांधीवादी प्रासंगिकता के समाप्त होने की बात कही है बल्कि उसके यथार्थ का वर्णन भी किया है। भारतीय गाँवों में किस-किस प्रकार के गठजोड़ बनते-बिगड़ते हैं, उसका सिलसिलेवार वर्णन रेणु के 'मैलाआँचल' में देखने को मिलता है। शिवमूर्ति भी कहीं-कहीं रेणु की अँचल परम्परा को अपने कथा-कृतियों में उकेरते है। उनके साहित्य में गाँव की सोंधी माटी की महक और छान-छप्पर को बनाते किसान दोनों की जीवन गाथा ग्रामीण दास्तान को सार्वभौमिकता प्रदान करती है।

उत्तर भारत के गाँवों की त्रासदीपूर्ण स्थिति इनके कथा साहित्य में तो जगह-जगह चित्रित है ही, लेकिन समग्र रूप में जब हम उनके साहित्य का अवलोकन करते है तो वह समस्या केवल उत्तर भारत की ही नहीं अपितु अखण्ड भारत के ग्रामीण अंचल की समस्या बन पड़ती है।

शिवमूर्ति ने अपने कथा-साहित्य में स्त्री सशक्तीकरण को जाग्रत करने का प्रयास किया है। उन्होंने अपने विविध स्त्री चित्रण द्वारा समाज में व्याप्त रूढ़िवादिता, अंधविश्वास, धर्मभीरूता, अनमेल विवाह, बाल-विवाह, स्त्री शोषण इत्यादि कुरीतियों को उजागर करने का प्रयास करते हैं। उनके अवध प्रान्त के गाँवों में कुछ परिवर्तन होते हुए दिखाई पड़ता है, जहाँ भारतीय समाज में दो वर्ग पहला पूँजीपति वर्ग और दूसरा शोषित वर्ग। इस भारतीय समाज में शोषित वर्ग (दबा हुआ, कुचला हुआ, असहाय) आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ था, परन्तु उनके साहित्य में शोषित वर्ग जो अपने अधिकारों के प्रति सजग होने के साथ ही उसे प्राप्त करने के लिए मुखर हो गया है। स्त्री जीवन के त्रासदी को शिवमूर्ति ने जिस सामर्थ्य के साथ चित्रित किया है, वह अन्यत्र नहीं दिखायी देता है। उनके स्त्री चरित्र संघर्षशील दिखाई देते है। उसे भाग्य पर नहीं छोड़ते हैं, बल्कि यह आवश्यक नहीं है कि उन्हें संघर्ष के लिए विजय ही हासिल हो। इस पर 'श्रीमद्भगवत्गीता' की यह पंक्ति चरितार्थ होती है कि- ''कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सोत्रस्त्वकर्मणि।।''[1]

गीता में श्रीकृष्ण यह उपदेश देते हुए कहते है कि हे पार्थ! (अर्जुन) तुम केवल अपने कर्म को करते रहो और फल की इच्छा मत करो। कहीं न कहीं शिवमूर्ति भी अपने स्त्री पात्रों को प्रोत्साहित करते हुए कहते है कि, तुम संघर्ष करती रहो जब तक विजय श्री न मिल जाय। समाज में व्याप्त दमनकारी शक्तियाँ स्त्री को न तो जीने देती है और न तो मरने देती है, क्योंकि हमारी सत्ता संरचना में पुरूष सत्ता और शक्ति दोनों का केन्द्र है। जो भी हो शिवमूर्ति के स्त्री पात्र निर्बल नहीं है क्योंकि वे न्याय और अधिकार के लिए लड़ते हुए दिखायी देते है। ये मर्दवादी सत्ता को ललकारने से भी नहीं चूकते हैं। 'कसाईबाड़ा' की सनिचरी, 'तिरियाचरित्तर' की विमली, 'अकालदण्ड' की सुरजी, 'केशर कस्तूरी' की केशर इत्यादि सभी स्त्री पात्र अन्याय और शोषण के खिलाफ आवाज को बुलन्द करती हुई दिखायी पड़ती है। 'कसाईबाड़ा' की सनिचरी प्रधान के घर के सामने धरने पर बैठ जाती है और कहती है कि- ''मोर बिटिया वापस कर दे बेईमनवा, मोर फूल ऐसी बिटिया गाय, बकरी की नाई बेंचि के तिजोरी भरै वाले ! तोरे अंग-अंग से कोढ़ फूटि के बदर-बदर चूई रे कोढ़िया......'[2]

प्रधान के द्वारा आदर्श विवाह के नाम पर किस-किस तरह से स्त्रियों का शोषण होता है; उस शोषण का केवल प्रधान ही जिम्मेदार नहीं हैं इसके साथ ही साथ उस व्यवस्था से जुड़े हुए सभी जिम्मेदार हैं। प्रधान तो एक जरिया है, उस तक पहुँचने का। जिसे उस आदर्श विवाह का केवल छोटा सा हिस्सा प्राप्त होता है। उस आदर्श विवाह के द्वारा उन स्त्रियों को बलपूर्वक वेश्यावृत्ति में धकेल दिया जाता है। उस आदर्श विवाह की शिकार हई युवती सुगनी जो उस शासन व्यवस्था का भंडाफोड़ करती है, बल्कि सुगनी इस स्वार्थपरक व्यवस्था का सनिचरी से खुलासा करती है कि- ''काकी, अपना परधान कसाई है। इसने पैसा लेकर हम सबको बेच दिया है। शादी की बात धोखा थी। हम सबको पेशा करना पड़ता है, रूपमती को भी। अमीरों के घर सोने भेजा जाता है।''[3] इस कहानी के पात्र लीडर जो छल रूप में सनिचरी का साथ देते तो दिखाई देते हैं, लेकिन उनका मकसद कुछ और ही होता है। गांधी जी के नाम पर धोखे से सनिचरी की जमीन अपने नाम करा लेते है।

'तिरिया चरित्तर' की विमली की स्थिति ज्यादा कारुणिक है, जो अपने ससुर के द्वारा छलपूर्वक बलात्कार का शिकार होती है। खाप के न्याय के नाम पर गरम कलछुल से दाग कर उसे कलंकिनी बना देता है। अपने ही घर में शिकार हुई स्त्री की व्यथा को प्रस्तुत करने में शिवमूर्ति से किसी की तुलना नहीं की जा सकती है। अमानवीय समाज व्यवस्था में स्त्री कराहती-घुटती हुई अपना प्रतिरोध करना नहीं भूलती है कि - ''मुझे पंच का फैसला मंजूर नहीं। पंच अन्धा है। पंच बहरा है। पंच में भगवान का 'सत' नहीं है। मैं ऐसे फैसले पर थूकती हूँ - आ-क्-थू......! देखूँ कौन माई का लाल दगनी दागता है।''[4]

इस तरह कहानी की दूसरी स्त्री पात्र मनतोरिया की माई से रहा नहीं गया। तब वह पंचायत की न्याय व्यवस्था का भण्डाफोड़ करती है कि - ''ई अन्धेर है। दगनी दागना है तो बिसराम और बोधन चौधरी के चूतर पर दागना चाहिए। कोई काहे नहीं पूछता कि बोधन की बेवा भौजाई दस साल पहले काहे कुएँ में कूदकर मर गई थी। गाँव की औरतें मुँह खोलने को तैयार हो जाएँ तो बिसराम की घटियारी के वह एक छोड़ दस 'परमान' दे सकती है। वही आदमी बेबस बेकसूर लड़की को दागेगा? और वही बोधन बड़का पग्गड़ बाँधकर दगनी की सजा सुनाएँगे? यही नियाय है? ई पंचायत नियाय करने बैठी है कि अंधेर करने?''[5]

आज भी यह देखने में आता है कि भारत की न्याय व्यवस्था में यही सब हो रहा है। इस कहानी में पंचायत की मूर्खता को मनतोरिया की माई साहस के साथ कहती कि बिसराम तथा पंच के आसन पर जो लोग बैठे है वे कहीं न कहीं सत्ता के प्रतीक है। सत्ता की

काली करतूतों को उजागर करना आज की माँग है।
'अकालदण्ड' कहानी में सुरजी न केवल संघर्ष करते हुए दिखायी देती है अपितु उसे विद्रोह करना भी आता है। जिसकी विवेचना शिवमूर्ति अपने शब्दों के माध्यम से करते है कि - ''अन्दर का दृश्य बड़ा भयानक है। सिकरेटरी बाबू पलंग पर नंग-धडंग पड़े छटपटा रहे है। सुरजी ने हँसिए से उनकी देह का नाजुक हिस्सा अलग कर दिया है और पिछवाड़े के रास्ते भागकर अँधेरे में गुम हो गई है।''[६] रेणु ने अपने कथा साहित्य में जिस लोकसंस्कृति एवं भाषा का प्रयोग किया था। शिवमूर्ति भी उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके, अतः इन्होंने ने भी अवध की संस्कृति एवं जन भाषा को अपने साहित्य का माध्यम बनाया। रेणु ने 'मैलाआँचल' में पूर्णिया जिले के मेरीगंज नामक गाँव को आधार बनाया है। जिस पर क्षेत्र विशेष में बोली जाने वाली लोक भाषा एवं लोक संस्कृति का प्रयोग किया गया है कि-
''मरे हमर सब कुछ पलिबरवा से,
फसी गइली परेम के डोर जी।''[७]
इसी प्रकार शिवमूर्ति का भी अपने क्षेत्रीय सरोकारों से मोह नहीं छूट सका है। इन्होंने अपने साहित्य में अवध की संस्कृति एवं अवध की लोक भाषा का प्रयोग किया है। इन्होंने 'बनाना रिपब्लिक' कहानी में बदलू ओर उसका साला सिर जोड़े पंजे मिलाए नाचते-नाचते झुके जा रहे हैं कि-
''कटै द्या गोस रोटी कटै द्या गोस रोटी,
आवै द्या शराब कटै द्या गोस रोटी।''[८]
निष्कर्षतः 'रेणु' ने 'मैलाआँचल' में पूर्णिया जिले की लोक भाषा एवं लोक संस्कृति को आधार बनाया है। वहीं शिवमूर्ति ने भी अपने साहित्य में अवध क्षेत्र विशेष को आधार बनाया है, बल्कि इन्होंने वहाँ की लोक संस्कृति, भाषा, मुहावरें एवं लोकोक्तियों का भी प्रयोग किया है। इनके साहित्य में स्त्री अत्याचारों को अब तक सहती रही है, बल्कि अब शिवमूर्ति की कहानियों में सामाजिक रूढ़ियों को तोड़कर समाज में अपनी पहचान बनाने का प्रयास करती है।

संदर्भ -
१. श्रीमद्‌भगवत्‌गीता - २/४७, गीताप्रेस, गोरखपुर
२. केशर कस्तूरी कहानी संग्रह, कसाईबाड़ा- शिवमूर्ति, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण २०१५, पृ० सं० ८
३. वही, पृं० सं० ६
४. केशर कस्तूरी कहानी संग्रह, तिरिया चरित्तर- शिवमूर्ति, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण २०१५, पृ० सं० १२२
५. वही, पृ० सं० १२२
६. केशर कस्तूरी कहानी संग्रह, अकालदण्ड - शिवमूर्ति, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण २०१५, पृ० सं० ५१
७. मैला आँचल - फणीश्वरनाथ रेणु, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, दसवाँ संस्करण, पृ० सं० ५७
८. बनाना रिपब्लिक - शिवमूर्ति, हिन्दी गद्यकोश डाट काम

गाय के वास्ते (लघुकथा)

सुरेशचन्द्र शुक्ल 'शरद आलोक', ओस्लो, नार्वे से

सड़क के एक ओर मंदिर है और दूसरी ओर मस्जिद है। सड़क के एक किनारे सब्जी की दूकान है और वहां लोग जमा हो रहे हैं। चारो तरफ हाहाकार मचा हुआ है। भीड़ अनवरत बढ़ती जा रही है। लोग आश्चर्यचकित हैं कि आखिर क्या हो गया है। सभी जानना चाहते हैं भीड़ क्यों लग रही है। आने-जाने वाले आपस में संवाद करने की जगह खुद अपनी आँखों से देखना चाहते हैं कि आखिर क्या हुआ है। ताजा समाचार जानने की होड़ में सभी खोजी पत्रकार बनने के चक्कर में हैं। फुटपात पर सब्जी की दुकान के अलावा मंदिर और मस्जिद की तरफ भी लोग अलग-अलग समूह में जमा हो रहे हैं, बिना यह जाने हुए कि आखिर क्या बात है? सड़क पर हमेशा एक साथ चलने वाले लोग मंदिर और मस्जिद के नाम पर दोनों ओर भी जमा हो रहे हैं, जैसे पतंगबाजी के दो समूह। पर ये पतंगबाजी वाले लोग नहीं वरन आस्थावान हैं। आज असल से ज्यादा दिखावा का जमाना है भले ही ढोल में पोल हो, बस ढोल बजना चाहिये। मैंने सोचा मैं ही क्यों दूर रहूँ भीड़ से और जानूँ कि आखिर माजरा क्या है?
मैंने पास जाकर देखा तो एक बहुत दुबली -पतली गाय सब्जी के दुकान के आगे अधमरी हालत में पड़ी है। लोगों ने सब्जी वाले को पकड़ रखा है। 'तुमने गाय की जान ले ली।' एक व्यक्ति ने कहा।
'साहब मैंने जान नहीं ली। गाय मेरी सब्जी पर जैसे ही टूट पड़ी तो मैंने उसे डंडे से भगाना चाहा और डंडे को सड़क पर जोर-जोर से पटका तो वह गाय घूम कर भागना चाहती थी और मुड़ते ही जमीन पर वह गिर पड़ी।
'तुम्हें गोहत्या का पाप चढ़ेगा, जानते हो', एक ने कहा।
'साहब यह अभी मरी नहीं है, देखिये उसकी आँखे खुली हैं और हाफ रही है।'
'थोड़ी सब्जी खा लेती तो क्या हो जाता?' भीड़ में खड़े दूसरे व्यक्ति ने प्रश्नचिन्ह लगाया।
'साहेब अभी हमारी बोहनी तक नहीं हुई। बची-खुची सब्जियां और पत्ते इन्हीं जानवरों को तो ही खिलाते हैं दुकान बंद करने के पहले। उस सब्जी वाले ने आगे कहना शुरू किया, 'यह गाय पहले कभी नहीं दिखी बाबूजी! आप रुकिए हम अभी गाय को पानी पिलाते हैं!'
उसने सब्जियों पर छिड़कने वाला पानी गाय के मुख में डालना शुरू किया, गाय हरकत में आने लगी। गाय मुख से जबान निकालकर मुख के ऊपर फिरने लगी।
'भीषण गर्मी की वजह से गाय बहुत प्यासी है, बाबूजी! देखो सूख कर दुबली हो गयी है। इसे पानी, भोजन और आराम की जरूरत है।' सब्जी वाले ने गीले टाट को गाय पर ओढ़ा दिया था। सब्जी वाले ने गौर से देखा उसे लगा कि गाय को इलाज की जरूरत है।
मैंने भी बीच में कहा, 'शायद तुम ठीक कहते हो, गाय को इलाज की जरूरत है।' मैंने सब्जी वाले की तरफ देखते हुए सोचा कि कुछ पुण्य-कार्य हो जाये और लगे हाथ सलाह दे डाली, 'भाइयों इसके इलाज के लिए चन्दा एकत्र करते हैं। और एक पशु-चिकित्सक को यहाँ बुलाते हैं। गाय इलाज से ठीक हो जाएगी और पुण्य भी मिलेगा।'
मैंने अपना गमछा गाय के बगल में बिछा दिया और लोगों से अपील करने लगा,
'गाय के इलाज के लिए कुछ दे दो'। गाय के वास्ते कुछ दे दो। पहले लोग कुछ रुके, कुछ ने अपनी साड़ी और जेब से कुछ सिक्के फेके और चल दिये। जो भीड़ में खड़े थे उनमें कुछ बिना पैसे दिए ही लौट गये। धीरे-धीरे भीड़ छटने लगी। जब मंदिर और मस्जिद की तरफ देखा तो इक्का -दुक्का लोग ही सुनकर आये और सिक्के डालकर चलते बने। जून का महीना था। शाम होने लगी थी। मैं सोचने लगा कि आदमी भावना का पुतला होता है और आसानी से किसी के कहने-सुनने से भावना में बह जाता है। गाय के बेहतर होने से बात आयी गयी हो गयी थी।
कुछ पैस गमछे में और कुछ बाहर बिखरे पड़े थे। मैंने गोहार लगना बंद नहीं किया था। मेरे साथ सब्जी वाला भी गोहार लगा रहा था, 'गाय के वास्ते।' आने जाने वालों की, मोटरसाइकिल की चिल्ल पों, रिक्शे, साईकिल की घंटियों की आवाज के बीच आवाज वातावरण में गूँज रही थी। 'गाय के वास्त...'।

मुआवजा (अवधी कहानी)

डा. ज्ञानवती दीक्षित

(एक मध्यम वर्गीय परिवार में पली-बढ़ी रेणु खटोड़ की प्रारंभिक शिक्षा फर्रुखाबाद में हुई। हिन्दी माध्यम से होने के कारण रेणु का अमेरिकी यूनिवर्सिटी में दाखिला मिलना कठिन था। टीवी देखकर रेणु ने अंग्रेजी बोलना सीखा। वर्ष २००८ में रेणु अमेरिकी यूनिवर्सिटी की चांसलर और प्रेसीडेंट नियुक्त की गयी। यह ओहदा हासिल करने वाली वह अमेरिका की पहली भारतीय हैं।
आजु अवधी साहित्यकार डा. ज्ञानवती दीक्षित की कहानी मुआवजा आप सब के तांय प्रस्तुत है. ज्ञानवती जी सहगल कालेज, नैमिषारण्य मां हिन्दी केरी व्याख्याता हैं। १३ अगस्त १९६६ मां जन्मी ई लेखिका हिन्दी औ अवधी दोनौ मां साहित्यरत हैं। इनकेरे लिखे कइयो कहानी संग्रह, उपन्यास, खंड काव्य औ प्रबंध काव्य प्रकाशित हुइ चुके हैं, कुछ अबहीं प्रेस मां हैं। ईके अलावा इनकेर कहानी, कविता, लेख, आलोचना, व समीक्षा आदि समय-समय पर विभिन्न पत्र-पत्रिकन मां छपत रहत हैं...)

बरसन बाद रामनगर लौटे हन। नौकरी केरी बंदिस देस के अलग-अलग सहरन मां लइ जाति रही। यहि क्रम मां आपन गाँव कहूँ पीछे छूटत गा। अब तौ पता नाय बरसन पहिले देखे चेहरा पहिचाने जइहैं या नांय। जैसेन गाँव जाय वाली पगडंडी पर मुड़ेन - एक अबूझ आवेग ते हृदय धड़कै लगा। हमार गाँव- पियारा गाँव- जहाँ केरी माटी हमरी सांसन मां महकत है जहाँ केरा एक-एक पेड़ हमार पहिचाना है। आय गए हन हमरे पियारे गाँव-
आय गए हन तुमसे मिलै के लिए। हमार आँखी भरि आर्यीं।
सामने लछिमी काकी केर घर रहै। अरे यौ एतना टूटि-फूटि गा। कबहूँ यौ गाँव केरा सबसे खूबसूरत घर हुआ करति रहै। हरी-भरी फलिन केरी बेलन से ढका, माटी से लीपा-पोता, चीकन-चमचमात घर। माटी से बने कच्चे घर केतने खूबसूरत हुइ सकत हैं-यहिका उदाहरन रहै लछिमी काकी केरा घर। बड़ी मेहनती रहै लछिमी काकी। भोरहें से सफाई मां जुटि जातीं। उनकी धौरी गइयौ उतनै साफ-सुथरी रहती रहै, जेतना गोबर से लीपा उनका आँगन. घर के समुंहे खूब साफ- सुथरा रहत रहै। हम बच्चा लोग हूंआ खेलै जाई, तौ धौरी गइया केर बढ़िया दूधौ पियैक मिलत रहै। कबहूँ काकी मट्ठा बनउर्ती, तौ ताजा लाल- लाल मट्ठौ पियैक मिलत रहै। गाँव केरे दूध, दही अउर मट्ठे केरा स्वाद तौ गाँवै वाले जानि सकत हैं। सहरन मां वहिकी कल्पनौ दुस्कर है।
हम धीरे से आवाज दिहेन- काकी---
अंदर से कांपत भई आवाज बाहर आई, खांसी के धौंसा के साथ कउन है?
-हम हन, काकी। अर्जुन- -।
हमार दिल धड़कि उठा। हमरे सामने मूर्तिमान दरिद्रता खड़ी रहै- फटे-पुरान कपड़ा, चेहरा पर असंख्य झुर्री मानौ सरीर के हर अंग पर रोग कब्जा कै लिहिन होय। लछिमी काकी केरा अइस हाल होइगा?
वा पहिले केरी सम्पन्नता कहूँ देखाय नाय परत है। घर केरी खस्ता हालत दूरि से आपन परिचय दै रही रहै।
अर्जुन हौ? रामचन्न दद्दा के लरिका?
बूढ़ी कोटरन मां धंसी आंखी हमार बारीक पर्यवेक्षण कै रही रहैं।
हाँ ! काकी .
हमरे मुँह से सब्द जैसे कठिनाई से रस्ता बनाय पाय रहे रहै।
तुम्हार अइसन हाल काकी ? घर मां सब कहाँ गे ? औ सरद कहाँ है ?
तुम्हरे काका के साथै , सब बिलाय गा, बचुआ. काकी धम्म से आँगन मां परे पुरान तखत पर बैठि गईं। बरसा मां भीजि के तखत केरी लकड़ी फूलि आई रहै। बड़ा फूला-फला रहै यौ आँगन कबहूँ। आजु खाली हुइगा बचुआ। तुम्हरे काका के आंखि मुंदतै सारा जहान बैरी हुइ गवा। सरद का पुलिस पकरि लै गई.. ऊ .. जेल्ह मां है बचुआ।
काकी आँचर से आँखी पोंछइ लर्गी।
जेल मां ??? काहे ?? का किहिस ऊ..?
कुछ किहिस होत तौ का गम रहै.. बचुआ.. ? निरपराध हमार लरिका जेल्ह मां बंद है। सूबा मां अइसी सरकार है भइया, जौ दलितन की बहू-बिटियन के साथ कुछ होइ जाय ऊँच-नीच, तौ हजारन केरा मुआवजा बाँटत है। गाँव मां हरिजन टोला मां अब रोज केरा तमासा होइ गवा है। हल्ला मचाय के कोई सवर्ण का फंसाय देव। कोई सुनवाई नाय। तुरतै हरिजन एक्ट लागि जात है। सिकायत करइ वाली का मुआवजा दीन्ह जात है। हमार सरद बेवा केरी अकेल औलाद रहै उनकी पइसन केरी हवस केर नेवाला बनिगा। हमार सवर्ण होब गुनाह होइगा बचुआ। हमरे साथ खड़ा होवइया कोई नाय रहै। कोई जांच, कोई फरियाद नाय सुनी गई। हमार मासूम लरिका, जौ कोई गाँव केरी मेहरुआ की ओर आँखी उठाय के देखतौ नाय रहै ऊ जेल्ह मां सरि रहा है .. बलात्कार केरे आरोप मां।
लछिमी काकी आँखिन पर आँचर धरि के रोवै लागीं. हम अवाक खड़े रहि गेन। यहु हमार वहै गाँव रहै- जहाँ केरी बहू-बेटी दुसरे गाँव मां ब्याही होतीं तौ बड़े-बुजुर्ग वै गाँव केरा पानी नांय पियत रहैं, कि लडकियैं तौ गाँव भर की सांझी बिटिया भई। वै गाँव मां अइसा घटै लगा पइसन के लिए? तौ का तालाब केरा पानी गंदी राजनीति केरी लाठी से फटिगा..? यहै संविधान रचा गा रहै, हमरे देस केरे लिए ..?
बूढी काकी केरी हिचकियैं हमरे बेजान कदमन केरा पीछा कै रही रहैं। हम धीरे-धीरे चलत भये गाँव केरा गलियारा पार कियेन। सामने हरिजन टोला रहै। धुत सराब पिए भैंरों काका जमीन पर लुढके पड़े रहैं। पास मां काला कुत्ता बइठा पूंछ हिलाय रहा रहै। दुइ किसोरी सिर पर घड़ा लिए पानी लेय जाय रही रहैं। छप्पर के अंदर से कोई मेहरुआ गन्दी-गन्दी गारी दै रही रहै। गारिन के साथ-साथ वहिके घर से मारापीटी की आवाजौ आय रही रहै। ई मारपीट मां छः सात छोटे बच्चा बिलखि-बिलखि के रोय रहे रहैं। पासै बजबजात, कूड़ा से पटी नाली रहै, वहे नाली मां एक सराबी लुढका पड़ा रहै। वहिके ऊपर माछी भिन-भिन करि रहि रहैं। हम राम सुमिरन का बड़ी मुश्किल से पहिचानेन। वौ हमरे साथ पढ़त रहै, अपरिचय के भाव लिए ऊ पास आवा। सिर के बाल खिचड़ी होइगे रहैं। चेहरा पर आश्चर्य के भाव रहैं।
अरे! बाबू जी, आप ?
का बाबू जी, बाबू जी कै रहा है... अरे! हमहन अरजुन- हम हंसिके कहेन।
आव, घरै चलौ।
सकुचात भवा बढ़ा। चारपाई पर बैठत-बैठत हम देखेन ऊका घर पक्का बनिगा रहै। बाहर हैंडपंपौ

लगा रहै।
और सुनाव का हाल है?
हाल देखि तौ रहे हौ, भैया। नाली मां पड़ा है। यहु मुरारी है। भैंरों कक्का केरा लरिका। पीके नाली मां परा है हरामी। गाँव के पंडित टोला के लरिका पर अपनी बिटिया से मुकदमा कराय दिहिस... बलत्कार कर. मुआवजा मिला है। हैलीकाप्टर से पुलिस के बड़े साहब आये रहैं। दै गे हैं। बस! दारू मुरगा उड़ि रहा है दूनौ बखत...
का कहत हौ? झूठै?
-अरे भइया!!!!!! पइसे के लिए का-का नाय होत है हियां. यहिमां तौ खाली रिपोट लिखवावै की है। एस. ओ. हरिजन है। आधा-आधा पइसा बटिगा पब्लिक पुलिस केर पुरान रिलेसन।
राम सुमिरन केरी आवाज दुःख मां डूबी रहै।
तौ तुम इनका समझावत काहे नांय ? तुम तौ पढ़े-लिखे हौ।
हमरे कहै से कोई काहे सुनै और मानै ..? हम मेहनत करइ क कहित है जब हराम केरा मिलि रहा है, तौ मेहनत को करी। एक-एक मेहरुआ केरे आठ-आठ , नौ-नौ लरिका हैं, एतनी योजना चलि रही हैं, आबादी बढाए जाव बस!
हम गाँव से निकरेन तौ मन बहुत दुखी रहै। का होइगा है हमरे प्यारे गाँव का? पहिले कइस भाईचारा रहै? अदब , लिहाज, शर्मोहया सब नष्ट होइगा। घर पंहुचेन तौ लड़िका-बच्चा घेरि लिहिन।
पापा! पापा! गाँव से हमरे लिए का लाएव?
का बताइत, का लइके आये हन। मन बहुत दुखी रहै। सोचेन टी.वी. देखी। टी.वी. खोलेन तौ आगी केरी लपटन मां धधकत एक घर देखाई पड़ा। कुछ गुंडा कूदि-कूदि के आगी लगाय रहे रहै। नेपथ्य से उदघोषक केरी आवाज आय रही रहै जी हाँ! यह वही घर है... जहाँ पं. जवाहर लाल नेहरू रहा करते थे... . जब वे पार्टी के प्रदेश अध्यक्ष थे. आज वर्तमान अध्यक्ष के बयान से क्रुद्ध होकर सत्ताधारी दल के समर्थकों ने इसे फूँक दिया है। अध्यक्ष को हरिजन एक्ट के तहत गिरफ्तार कर जेल में ठूंस दिया गया है। विरोध प्रदर्शन जारी है...
हम टी.वी. बंद कै दियेन। सामाजिक परिवर्तन, न्याय, और समानता केरे नाम पर नई-नई पार्टी खड़ी भई हैं। हम सोचि रहे रहन इनका लोकतंत्र केरे कौने अध्याय मां पढ़ावा जाई ..?

आम आदमी (लघु कथा)

- सुरेशचन्द्र शुक्ल 'शरद आलोक' ओस्लो, नार्वे

यह धनीराम लातूर जिला के गाँव से आया है सरकार। बहुत सूखा पड़ा है। आदमी जानवर सब बेहाल हैं। एक किसान के लिए आप ही माई बाप है हुजूर। किसानों के लिए नेताजी ने वायदे किये थे इसलिए सोचा सरकार राजा बन गए हैं तो उनके द्वारे गोहार लगाई। इसी लिए आये हैं।
द्वार पर खड़े चौकी दार को धनीराम ने आने का कारण बताकर नेताजी से मिलने की जरूरत बताई। चौकीदार ने ऊपर से नीचे तक देखा मैले-कुचैले कपड़ों में टायरसोल चप्पल पहने हाथ में एक मटमैला झोला लिए हुए उस अधेड़ आयु के आदमी को देखा और पूछा,
'क्या तुमने नेता जी से समय लिया है, यदि नहीं तो ऐसे तुम उनसे नहीं मिल सकते।'
'अरे साहब! जब चुनाव में आये थे सरकार (नेताजी) कह रहे थे कि हमारे दरवाजे सभी के लिए खुले हैं. जब कोई जरूरत हो तो जनता -जनार्दन सभी मिलने आ सकते हैं, सो हम आइ गये। धनीराम ने अपनी बात जारी रखते हुए पुनः गिड़गिड़ाकर कहा,
'बहुत दूर से आये हैं महाराज। दिल्ली बहुत दूर थी तो सोचा कि हम ही चल कर आ जायें। दो दिन में यहाँ पहुँच पाये हैं साहेब! हमका नेताजी से मिलवा देव।'
चौकीदार अंदर गया और उसने समाचार दिया कि कोई किसान नेताजी से मिलना चाहता है। चौकीदार बाहर आकर बोला,
'तुम नेताजी से नहीं मिल सकते। किसी की सिफारिश लेकर आये हो?'
'जनता को अपने नेता से मिलने के लिए सिफारिश की जरूरत है हुजूर!', धनीराम ने बहुत आतुरता से चौकीदार से पूछा।
'हाँ भैया, बिना सिफारिश कुछ नहीं होगा। नेता जी एक दिन में किससे - किससे मिलेंगे। बिना भोग के तो भगवान भी खुश नहीं होते।' चौकीदार ने नजर फेरकर कहा.
'मालिक से मिलकर हम भी उनके पांवों पर पड़ जाएंगे, जैसे हम मंदिर में भगवान के आगे सभी कुछ अर्पित कर देते हैं।'
'उससे क्या होगा, भैया। भगवान कौन बोल सकते हैं या देख सकते हैं कि वह फैसला करें कि तुमने कितना भोग मंदिर में चढ़ाया है?', चौकीदार ने उत्तर दिया।
'भैया जिनके पास नहीं होता उनकी भी भगवान सुनते हैं?' देखकर धनीराम आशा से देखने लगा।
'मालिक पूजा कर रहे हैं। उसके बाद वह बंगलूर जाएंगे, वहाँ देश की समस्या पर विचार करेंगे। पूरे देश से कार्यकर्ता इकठ्ठा होंगे। पार्टी की बहुत भारी मीटिंग है।'
'हम भी बहुत दूर से आये हैं हुजूर । हमका निराश न करो।', कहकर धनीराम ने हाथ जोड़ लिये।
'पहले तुम अपने गाँव-जवार के नेता से बात करो, प्रधान से बात करो फिर एम एल ए लोग भी जनता के सेवक है।' उनसे कहो सुनो!
'सूखा देख कर प्रधान गाँव छोड़कर चले गये। गाँव में केवल गरीब लोग बचे हैं। बाकी सब छोड़कर भाग गये। अगर हुआं हमरी बात सुनी जाती तो हम हियां गुहार लगाने क्यों आते!' धनीराम ने चौकीदार को हकीकत बयान किया। बहुत अनुनय-विनय करने पर चौकीदार एक बार फिर अंदर गया। अब अंदर से गुस्से में किसी की आवाजें आ रही थी।
'तुमको समझाया था कि किसी से नहीं मिलना है मुझे। जाने कहाँ-कहाँ से आ जाते हैं। एक बार अगर इन लोगों की मदद करेंगे तो दुबारा आएंगे। तिबारा आएंगे और इसी तरह सिलसिला चलता रहेगा। पार्टी के लिए समय कहाँ बचेगा? अगर कोई खास आदमी होता तो और बात थी। न तो दानदाता न ही कोई कॉर्पोरेटर जो चुनाव जिताने में मदद करता। सा.. रे..गा... मा... आम आदमी।
चौकीदार आकर जवाब देता तब वहाँ कोई नहीं था। उसने गेट के बाहर आकर देखा, तो वह किसान कुछ दूर तक जा चुका था।

आवाजों की दुनिया

इला प्रसाद, यू.एस.ए.

गली में अभी धूप पसरी हुई थी। गर्मियों की शाम पाँच बजे का समय कुछ नहीं होता। सूरज तब भी सिर पर चमकता सा लगता है, जमीन तप रही होती है। लोग घरों में दुबके होते हैं और मोहल्ले में सन्नाटा पसरा लगता है। इक्का-दुक्का रिक्शेवाले.. यह समय गली में पैदल चलने के लिये, कुछ रहस्य बाँटने के लिये, दो बच्चियों को सही लगा।

"माँ और मामी क्या बातें कर रही थीं?"

"तुमने सुना नहीं?" नहीं न!

चल, बताऊँ।

चारु ने चंदामामा छोड़ा और रूपा के साथ हो ली। ऐ, कहाँ निकल रही हो तुम- इतनी धूप में? पीछे से चारु की माँ ने टोका।

ये बस गली के मोड़ तक। चिक्कू को घुमा लायेंगे।

नहीं, अभी धूप है।

"थोड़ी दूर तो है। अच्छी हवा चल रही है। घर में बंद हैं दिन भर। जाने दीजिये न बुआ।" रूपा ने चिरौरी की।

"अच्छा जाओ। ज्यादा इधर-उधर मत जाना। सीधे भाभी के पास।"

"हाँ!"

रूपा ने चारु को इशारे से बुलाया और दोनों बाहर निकल आईं।

भाभी ने अलसाते हुये दरवाजा खोला। दस बरस की रूपा उनकी दूर के रिश्ते से ननद है और गली के छोर का आखिरी मकान उनका है। वे जिस किराये के मकान में हैं वह इन दोनों के घरों के बीच पड़ता है। इसी गली के अगले छोर पर रहने वाली ग्यारह साल की चारु रूपा की फुफेरी बहन है। उनका डेढ़ साल का बेटा चिक्कू इन बच्चियों का प्रमुख आकर्षण है। आज भी आ पहुँचीं... डटी हुई हैं कि चिक्कू को घुमाने ले जायेंगी- बाबा गाडी में। भाभी को लगा कम से कम आधे घंटे के लिये जान छूटी। शरीर सीधा कर लें, फिर चाय बनायेंगी। उमेश के लौटने तक ये लौट आयेंगी।

जब वे बाबागाड़ी में चिक्कू को डाल कर घर से निकलीं, तब तक सचमुच शाम हो गई थी और ठंडी हवा चलने लगी थी।

रूपा ने मोर्चा संभाला .. सदा की दादी अम्मा। पाकोमामा!

चारु को जानने की उत्कंठा। कभी कायदे से सुन जो नहीं पाती बड़ों की बातें.. हालांकि आसपास ही बैठी होती है। अभी रूपा मिली है। इसको सब पता होगा।

"पता है, वो बनर्जी साहब हैं न, हमारे किरायेदार उनकी दीपू घर से भाग गई।"

"कब?" चारु ने अविश्वास से मुँह बनाया।

"कल। उसके माँ-बाबा में खूब लड़ाई होती है न। लगता है, इसीलिये चली गई"- रूपा ने अपनी अकल लगाई, फिर जोड़ा-घर में चिट्ठी छोड़ गई है कि मुझे मत खोजना। सब कहते हैं कलकत्ते गई है। वही तो बता रही थी माँ, फुआ को।"...

माँ-पिता में लडाई हो तो घर से भाग जाना चाहिये? चारू सोचने लगी। उसे यह उचित नहीं लगा। चुपचाप रूपा के साथ चलती रही।

लेकिन यह सच था कि सारे रहस्य ऐसे ही खुलते हैं चारु के लिये। कोई कुछ बतला देता है, कोई कुछ समझा देता है, कान में फुसक देता है, तो वह सुन लेती है। कभी आधी-अधूरी, अधकचरी बातें भी! आज भी वह चेहरे से निर्विकार लेकिन मन में नई मिली जानकारी को गुनती हुई, साँझ ढले घर वापस लौटी। किसी से कुछ पूछना भी नहीं, डाँट पड़ेगी- रूपा ने समझा दिया है। उससे भी किसी ने कुछ खास नहीं पूछा। उसने दूध पिया, एक रोटी खायी और फिर चंदामामा पढते- पढते सो गई।

स्कूल में चारू का उठा हुआ हाथ हवा में झूल गया। नेली दी ने इस बार भी उसे सवाल का जवाब नहीं देने दिया।

"रीना, तुम बोलो, पानीपत की दूसरी लड़ाई किस ईसवी में हुई?"

....

विभा, तुम?

...

"नेली दी, आप मुझे बोलने क्यों नहीं देतीं?" चारू ठुनकी। उसे नेली दी अच्छी लगती है और इसलिये इतिहास भी।

"हर बार तुम्हीं बोलोगी? मैं जानती हूँ तुम्हें सही जवाब मालूम है। ये लड़कियाँ जो पढ़ती नहीं, इन्हें पढ़ाना है मुझे।" नेली दी चारु की तरफ प्यार से देख कर मुस्करा दीं।

क्लास में खुसफुस शुरु हो गई।

क्लास के बाद खेल के मैदान में उसे रीना ने रगड़ा। श्यामली और सुषमा साथ में।

जब नेली दी बोलती है, तब तो सब सुनाई देता है और जब हम बोलते हैं तो सुनाई नहीं देता। कबड्डी.. जानबूझ कर नहीं सुनती। हम सब समझते हैं।

मेरी साँस नहीं रुकी थी। तुम हारी। मैं धीमे बोल रही थी- कबड्डी... कबड्डी... ऐसे "सुषमा अपना मुँह चारू के कानों के पास ले आई, फिर गुस्से से बोली" "तुम अपने कान डाक्टर को दिखाओ।"

तुम क्या कम सुनती हो! चारु बुरा मत मानना, लेकिन मुझे लगता है... यह रीना थी।

"जी नहीं, मैं सब सुन सकती हूँ। नहीं खेलूंगी जाओ।" दृढ़ स्वर में बोलती हुई, गुस्सा दिखाती हुई, चारू अलग जा खड़ी हुई सबसे दूर। कभी नहीं जानने देगी किसी को कि वह कम सुनती है। कितनी शरम की बात है!

रात का समय... भाई कहीं से अमीन सयानी का कैसेट उठा लाया है। टू इन वन को घेरकर खड़े हैं सब। बिनाका गीतमाला में अमीन सयानी की आवाज गूँजती है- "और आखिरी पायदान पर है यह गीत... जय जय शिव शंकर...

चारु सुनती है, गुनगुनाने की कोशिश करती है और अटकती है.. जो तूने मुझे थाम न लिया, सौरभ जी,ठहाका लगाता है भाई "नहीं मेरा नाम नहीं है इस गाने में"

"बताईये न, क्यो गाती है?" चारू मिन्नतें करती है। आकुल है जानने के लिये।

दीदी मुस्कराती है। छोटी बहन हँसती है- ही! ही! इसे तो सुनता ही नहीं!

कोई नहीं बताता। कोई नहीं देखता साँवली- सलोनी चारु का रुँआसा हो आया चेहरा!

चारू खूब पढ़ती है। बड़ी-बड़ी किताबें। कोर्स की किताबों के सिवा भी बहुत कुछ-कहानी, उपन्यास, कविता की किताबों में डूबी रहती है। खूब अच्छा ध्यान है उसका। चारों तरफ के हो हंगामें में भी पढ़ लेती है। किताबें उसे बहुत अच्छी लगती हैं। वे उस पर हँसती जो नहीं...

"धीमे बोल, सुन लेगी।"

"ना, वो ऊँचा सुनती है। ऐसे भी डूबी है किताब में।"

"केतना पढ़े हो!..."

"खूब मन लगा है।"

वे अपनी गति से अपने सहज स्वर में बातें करती रहीं। बगल में बैठ कर। रूपा की माँ चारु की माँ से। ननद- भाभी..
चारु को गुस्सा आया। उठ कर दूर जा बैठी। वह हाव भाव से पकड़ लेती थी कि उसी के बारे में कुछ बातें हो रही हैं। कान लगाया। कान होते तब तो... कब पानी आयेगा, कभी पस... कभी आवाजें.. सारे समय जैसे बंद रहते हैं कान। जाते रहो डाक्टर के पास.. ठीक ही नहीं होता। इसीलिये तो वह चुप किताबें पढ़ती है। अपनी दुनिया में गुम।
बनर्जी साहब का परिवार मुहल्ले से चला गया। दूसरे शहर में। यह चारू ने रूपा से ही जाना।
चारु अब कालेज में पढ़ती है। खूब सारी किताबें और एक-दो दोस्त। सह शिक्षा वाला कालेज। लड़कों से तो बात करने का प्रश्न नहीं, लड़कियों के बीच भी गुमसुम।
-चारू तू बोला कर यार!
-मुझे भी तो टांसिल्स हैं। आपरेशन करवाना है। मैं तो तेरी तरह चुप नहीं रहती! पता है मैं रवि शास्त्री पर फिदा हूँ। क्या खेलता है यार। इतना हैंडसम है। मैं तो उसकी बीबी बनना चाहती हूँ। नंदिता चहक रही थी। गोरी सुन्दर नंदिता!
- दूसरी बीबी? चारू ने टोका।
- चलेगा..
हो... हो... हो.. इस बार सम्मिलित ठहाके में चारु की धीमी हँसी भी शामिल थी।
- देख शबाना, तुझे तो डाक्टर बनना है न। ई एन टी स्पेशलिस्ट बनना। चारू के टांसिल ठीक करना।
- लेकिन मुझे साइनस की बीमारी भी है। चारू के बोल फूटे।
-हाँ, वह भी ठीक हो जायेगा। ई.एन.टी का ही मामला है।
- हाँ, उससे मन बहुत खराब लगता है। इसलिये तू चुप रहती है, है न! शबाना ने सहानुभूति जतायी।
- हाँ! टांसिल्स की वजह से कान भी भारी रहते हैं।
- हाँ, यह होता है!
चारु ने आश्वस्ति की साँस ली। झूठ काम कर गया था।
हँसती- खिलखिलाती लड़कियों का झुंड गर्ल्स कामन रूम में प्रवेश कर गया।
इसे पढ़ना अच्छा लगता है, इसे पढ़ने दो।
चारू के माँ-पिता रात के भोजन के बाद आपस में धीमे स्वर में बात कर रहे थे।
“इतना कम सुनती है, कैसे होगी इसकी शादी!”
“इतना पैसा भी नहीं कि आपरेशन ही करवा देते। कान के परदे में जो बड़ा छेद है, उस पर चिप्पी लगा देते हैं डाक्टर। टिम्फोप्लास्टी कहते हैं उस आपरेशन को। कहते हैं कि तब ठीक सुनाई पड़ने लगता है।
“लेकिन बहुत बार आपरेशन फेल भी हो जाता है।”
“चारू बहुत कमजोर भी है। इसका आपरेशन सफल होगा क्या?”
“इसे पढ़ने दो। अपने पैरों पर खड़ी हो जायेगी तो शायद ब्याह भी हो जाये। न हो तो आत्मनिर्भर तो होगी।”
“पढ़ना तो अच्छा लगता ही है उसे।”
चारू को, रेलवे में छोटे अफसर-उसके बाबूजी ने कहा है कि वह जितना चाहे पढ़ेगी। कोई नहीं रोकेगा उसे। चारू को नहीं पता उन्होंने आपस में क्या बातें की हैं। चारु खुश है!
खूब पढ़ने वाली चारु युनिवर्सिटी में आ गई है। एम.ए. कर रही है- सोशियोलाजी में। खाली पीरियेड में सब लड़के-लड़कियाँ साथ बैठते हैं। गाते हैं, गुनगुनाते हैं नोट्स बनाते हैं, प्रोफेसरों के कैरी केचर से लेकर दुनिया भर की बातें और और हँसी-मजाक करते हैं। सब दोस्त हैं। बारह छात्र- छात्राओं का एक ग्रुप है जिसमें चारू भी है। अशोक उसे ध्यान से देख रहा है।
क्या हुआ? चारू ने नजर उठाई।
मैं तुम्हीं से पूछ रहा हूँ, तीसरी बार-तुमने फाइनल एक्जाम के लिये नोट्स बना लिये? किस दुनिया में रहती हो तुम? सुनती ही नहीं।”
अब चारू ने कमरे में नजर दौड़ाई। सब उसे देख रहे हैं और हँस रहे हैं।
“गजब का कन्सेन्ट्रेशन है यार! टाप करेगी।”
“हाँ, मैं कुछ सोच रही थी।”
“इतना मत सोचा करो। शेयर किया करो। कुछ हम भी सोच लेंगे।”
सम्मिलित हँसी...
चारू उठ खड़ी हुई।
अनूप गा उठा-
रुक जा, रुक जा ओ जाने वाली रुक जा..
चारू को रुकना नहीं था।
उसे तो नौकरी तक पहुँचना था, कैसे रुक जाती।
हमारा क्या दोष है?
बैंक की नौकरी चारू को रास आ गई है। हाँ, घर से दूर हो गई है। राँची से जमशेदपुर की दूरी अधिक नहीं है, यह अच्छी बात है। वर्किंग वीमेन्स हॉस्टल में रहती है चारु। एक नया अनुभव! बैंक में बगल की टेबल पर बैठने वाली अनीता, चारू को अच्छी लगती है। उन दोनों में एक समानता है। दोनों के ही कान खराब हैं। “मुझे कम सुनाई देता है।”
“मुझे भी।”
“क्यों, क्या हुआ था तुम्हें?”
“गलत दवा दी थी डाक्टर ने बचपन में। कान के परदों पर असर पड़ गया। सारे वक्त कान से पानी आने लगा। कभी पस आता। बहुत ईलाज हुआ, होमियोपैथी का। अब कान सूखे रहते हैं तो पहले से बेहतर सुनाई देता है, लेकिन बहुत बड़ा छेद है, एक कान के परदे में। दूसरे में उससे छोटा। डाक्टर ने बताया था चेक करके कि सुनने की क्षमता पचहत्तर प्रतिशत ही है। तब छोटी थी। कहा, बड़े होने पर हो सकता है परदे अपने आप बन जायें। लेकिन ऐसा हुआ नहीं। चेक कराया था मैंने। आपको क्या हुआ था?”
“मलेरिया । उसका असर कान पर पड़ा”, फिर थोड़ा हँस कर बोली अनीता- “मुझे तो सब बहरी बुलाते थे स्कूल में।” बहुत गुस्सा आता था। जबकि मैं इतना भी कम नहीं सुनती थी। डाक्टर भी कहते हैं, छोटा सा छेद है। बीस प्रतिशत कम सुनती है, लेकिन तब समझ नहीं थी न। बता दिया था और सबको मौका मिल गया हँसने का। अब इसलिये मैं जल्दी किसी को बताती नहीं। तुम अच्छी दोस्त हो इसलिये इतने दिनों बाद बता दिया।
”मैं तो बताती ही नहीं किसी को। कभी ऐक्सेप्ट ही नहीं किया। कितने शरम की बात है!“
”इसमें शरम की क्या बात है! इसमें हमारा क्या दोष!“
चारू ने सोचा- लेकिन अगर वह अब भी अपनी समस्या से बाहर आने की कोशिश नहीं करती तो यह जरूर उसका दोष होगा।
पहली कोशिश
“डाक्टर ने कहा- ” वन टू जीरो।
“गलत। डाक्टर ने कहा था फोर टू जीरो। चार सौ बीस। तुम्हारा कान अभी भी ठीक नहीं हुआ।”
यह प्रतीक था। छोटे भाई सा। उसकी टांग- खिंचाई में अव्वल, लेकिन दिल का भला।
सब खिलखिला कर हँसे। चारू भी। सहज मुक्त हँसी। जीवन में पहली बार।
अपनी नौकरी के बूते जमा किये पैसे से अपने कान का आपरेशन करवा कर चारु खुश है। बैंक की नौकरी ने उसे दोस्त दिये हैं। चारू को अब नहीं छुपाना किसी से कुछ भी। वह तो बाहर आ गई अपनी समस्या से। अनीता ने ही साहस दिया। वही आसपास रही आपरेशन के वक्त। माँ- बापू तो रुक नहीं सकते थे, घर भी देखना था। बस एक दिन रुके, और वापस हास्टल पहुँचाकर चले गये।
आजकल चारू बौखलाई सी घूमती है। अचानक से उसके चारों ओर आवाजें ही आवाजें हैं। उसके चलने से चप्पलों से आवाज होती है। घड़ी की टिकटिक परेशान करती है। रजिस्टर के पन्ने पलटने से भी आवाज होती है... इतनी सारी आवाजें, इतना शोर

है दुनिया में?
भौंरें सचमुच कान में गुन-गुन करते हैं। कवियों की कल्पना नहीं है यह।
सड़क पर गाड़ियों का शोर कितना ज्यादा है!
कमरे के अन्दर, बंद खिड़कियों से भी भोर की आहट पहुँच जाती है। चिड़ियों की आवाज के साथ!
तेज हवा सन-सन करती है। हवा की भी आवाज होती है!
रोमांचित है चारू, बौखलाई हुई है चारू, मुग्ध है चारू! आवाजें-आवाजें-आवाजें! कितनी आवाजें हैं दुनिया में, वह पच्चीस साल में पहली बार जान रही है।
सोचो तो, कितनी अजीब बात है!
फिर चारू ने सोचा, उसने जाना तो! अगर कभी जान ही न पाती!
यह खुशी बहुत दिन कायम न रही। एक दिन बरसाती मौसम में फिर से कान में पानी आया। वह भागी डाक्टर के पास। "आय अम सॉरी-" जवाब मिला" ऐसा होता है। "टिम्फोप्लास्टी के अस्सी प्रतिशत आपरेशन ही सफल हो पाते हैं।" चारू बाकी के बीस प्रतिशत में आती है। चारू का नसीब! चारू फिर से बौखलाई हुई है।
आवाजें गुम। जिंदगी मुँह चिड़ा रही है।
दूसरी कोशिश चारू घर आई है। तीन बरस हो गये उसे नौकरी करते हुए, अब तो शादी हो ही जानी चाहिये। उसकी शादी के लिये रायपुर में बात तय हुई है। उसे उस लड़के से मिलना है, बात करनी है। वह भी स्टेट बैंक में है, बात बनी तो कल को ट्रांसफर ले सकती है।
"मुझे अपने कान चेक कराने हैं फिर से। अगर उसकी बात ठीक से न सुन पाई तो क्या जवाब दूँगी। मुझे सुनने की मशीन लेनी है। इतनी अच्छी तो मशीनें आती हैं अब। कान के पीछे लगाने वाली। मैं अपने पैसे से खरीद लूँगी।"
चारू घबराई हुई है। चारु डरी हुई है। वह शादी करना चाहती है। माँ ले जाती हैं डाक्टर के पास।
"इतनी तो खराब नहीं है इसकी सुनने की क्षमता। फिर लड़की का मामला है। मशीन दे दूँ और बात कट जाय इसी बात पर तो? सोच लीजिये। मैं तो कहूँगा, शादी के बाद यह सब सोचिये।" डाक्टर ने उसके कान चेक करने के बाद फरमाया।
चारू को बेहद गुस्सा आया। उसे श्रवण यंत्र चाहिये लेकिन यह डाक्टर देगा नहीं। माँ किसी और के पास भी नहीं ले जायेगी। सब यही कहेंगे। न सुन पाई, इसी बात पर कट जा सकती है शादी, यह नहीं सोचते। और अगर हो गई शादी तो झेलेगी चारू, इन्हें क्या!
"बी प्रैक्टिकल! छोटी की भी शादी करनी है।" "ठीक है, मैं करुँगी उससे शादी, लेकिन उसे बता दो कि मैं कम सुनती हूँ।"
"ठीक है, बतला दिया जायेगा उसे। पहले बात आगे तो बढ़े।"
चारू गई रायपुर। मिली उससे, दोनों परिवारों के सामने। वह मिलना ऐसा नहीं था कि वह खुद कुछ कह पाती। लेकिन, लड़के वालों को पसंद आ गई। शादी तय हो गई। उसने बाद में स्नेहलता को पटाया। वह उसके बैंक में थी और उन लोगों को जानती थी। उसके आश्वासन से निश्चिन्त हुई कि उसकी समस्या जानने के बाद भी अरविंद उससे शादी करने को तैयार है। खुश हुई।
चारू की शादी हो गई। शादी के साल बीतने से पहले ही वह रायपुर पहुँच गई अपनी नौकरी के साथ।
आखिरी कोशिश "किस दुनिया में रहती हो? कुछ बोल रहा हूँ मैं, सुना करो।"
चारू ने असहाय भाव से नजरें उठाईं- "जानते तो हो, कम सुनती हूँ। जरा जोर से बोला करो।"
"अरे वाह! यह कब हुआ? नई खबर!"
"स्नेहलता ने नहीं बताया? उसने तो कहा था कि बतला दिया है और तुम मुझसे शादी करने को तैयार हो तब भी।"
"मुझे तो किसी ने नही बताया। अच्छा धोखा है।"
गुस्से में बड़बड़ाता अरविंद कमरे से बाहर हो गया। वह पीछे- पीछे आई "तुम्हें किसी ने धोखा नहीं दिया। कम से कम मैंने तो नहीं ही। मैं तो शादी के लिये मिलने से पहले ही श्रवण यंत्र खरीद लेना चाहती थी कि तुम्हें ठीक से सुन सकूँ।"
"तो लिया क्यों नहीं? फिर कुछ कहने- सुनने की जरूरत ही न होती। मैं पहले ही मना कर देता। मशीन वाली लड़की से शादी करके अपनी बेइज्जती थोड़े ही करवाता।
"तुमने कभी देखी भी है वह मशीन?"
ढेर सारा आँसू बहा, लड़ने- झगड़ने, मान- मनौव्वल के बाद वह अंततः अरविंद को शहर के आडियोलाजिस्ट के पास अपने साथ जाने को राजी कर पाई। इस बिंदु तक आने में भी महीनों लगे, लेकिन वहाँ मशीन की कीमत सुन कर वह बिदक गया- "सवा लाख। तुम अपने सारे गहने बेच दो, तब आयेगी मशीन।"
"लोन लेकर ले सकते हैं। कुछ सालों में चुक जायेंगे।"
"नई शादी, नई नौकरी। अभी दूसरे खर्चे नहीं होंगे क्या?"
बात सही थी। चारू ने इंतजार किया। अगले पाँच साल। झेलती रही- अपमान व्यंग्य। लड़ती रही अरविंद से अपनी निरपराधिता साबित करने के लिये- अपने तरीके से। एक बच्चे की माँ बनी। पति का विश्वास जीता और फिर एक दिन किश्तों पर नया श्रवण यंत्र खरीदने आडियोलाजिस्ट के पास पहुँच गई। इस बार अरविंद की सहमति से, उसके साथ। पुनर्जन्म मिला जैसे।
एक छोटा सा बुकलेट और बारह इंच चौड़ा, छह इंच लम्बा डब्बा अब उसके हाथ में था। डब्बे के अन्दर-दो छोटे गोल डब्बे और डब्बे से से निकलीं दो छोटी-छोटी कान के अन्दर छुप जाने वाली मशीनें। क्या यह वैसे ही काम करेगी, वैसा ही महसूस होगा उसे, जैसा टिम्फोप्लास्टी के बाद हुआ था! वह उत्तेजना से कांप रही थी। आडियोलाजिस्ट ने उसे शीशे की दीवारों से घिरे कमरे में बिठाया। कम्प्यूटर से श्रवण क्षमता की जाँच की और मशीन उसकी जरूरत के हिसाब से सेट कर दी। कान के पीछे। चारु सहसा पीछे लौट गई- जमशेदपुर.. ऑपरेशन.. वन टू जीरो.. हाँ, फिर से वही आवाजें हैं, वही शोर जो अपनी झलक दिखा कर गायब हो गये थे। घड़ी की टिकटिक कानों तक पहुँचने लगी। कागजों की फड़फडाहट भी। बाहर निकली तो सड़क पर चल रहे वाहनों की आवाज, इन सबके बीच कौओं की कांव-कांव और बगल की दूकान पर धीमे स्वर में बज रहा गाना भी-वही पुराना गाना-जय, जय शिव शंकर.. रोमांचित उसने सुना... सा रब दी..सौं रब दी। उसके पैर ठिठक गये.. "रुक क्यों गई?"
"यह गाना ..."
"तुम्हारा फेवरेट है?" अरविंद मुस्कराया।
"नहीं, आज सुन पाई। सौं रब दी।" आँखों के कोरों से एक बूँद आँसू ढलक गया।गला रुँध गया। अरविंद ने अबूझ नजरों से उसे ताका।
चारु ने होंठ भींचे। पर्स से रूमाल निकाला, आँसू पोंछा और सहज होने की कोशिश करते हुए साथ-साथ चलने लगी।कुछ कहने की इच्छा ही न हुई। बरसों से कुंठित स्वाभिमान जाग रहा था, बीता समय चलचित्र की तरह आँखों के आगे आ रहा था। बचपन से तो हमेशा झेला ही, अपने पैरों पर खड़े होने के बाद भी इतने साल इंतजार करना पड़ा! अरविंद ने ही कब उसकी परेशानी समझी, गुस्सा दिखाता रहा हर वक्त। उसके न सुन पाने की कुंठा मन में पाले रहा, इतने साल। और अगर आज उसका साथ देने को राजी हुआ है तो वह इसलिये नहीं कि उसने उसका दुख महसूस लिया, वरन इसलिये कि वह जिस समाज में जीता है, उसमें चारु की यह कमजोरी उसकी इज्जत घटाती है, इसलिये भी कि चारु अपने बूते पर लोन की किश्तें चुका सकती है। अगर वह आवाजों की दुनिया से इतने साल बाहर रही, तो उसकी वजह यह नहीं थी कि उसकी श्रवण शक्ति कम थी। यह दुनिया ऊँचा सुनती है! बहरी और कम अक्ल है दुनिया!

स्वयं के घेरे

अलका प्रमोद

अर्चिता की कार चली जा रही थी बाधा रहित हवा से बातें करती, ऐसी ही तो उसकी जिंदगी की गाड़ी भी चल रही थी, हवा में उड़ती मस्त खिलखिलाती,मस्ती से भरी। उसकी जिंदगी की गाड़ी की स्टीयरिंग उसके वश में थी, वो जिधर चाहती थी गाड़ी उधर ही जाती थी।

मात्र सत्रह साल की ही तो थी जब उसका चयन इन्जीनियरिंग कालेज में हो गया था, जब अर्चिता का हैदराबाद की कानफ्रेन्सिंग में चयन हो गया तो उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। पर मन ही मन उसे घर से दूर जाने का भय भी सता रहा था। मम्मी-पापा से दूर रहने की कल्पना ही उसे रुला रही थी। एक बार तो उसका मन हुआ कि छोड़ दे और अपने शहर के ही किसी कालेज में प्रवेश ले ले। पर क्या करती भविष्य का प्रश्न था। घर से जाते समय वह कितना रोई थी, तब पापा ने समझाया था “तू तो मेरी बहादुर बेटी है, बेटा जीवन की राह संघर्ष से भरी होती है और जीवन में सफल होने के लिये, आगे बढ़ने के लिये साहस करना पड़ेगा।”

अर्चिता जब हॉस्टल के कमरे में पहुंची तो वार्डन ने उसे बताया कि उसका कमरा नम्बर ३४ है और उसके साथ श्रेष्ठा कपूर रहेगी। यह सुन कर अर्चिता का मूड खराब हो गया। कोई कैसे दिन रात किसी अनजान के साथ रह सकता है? इम्पॉसिबिल! उसे याद नहीं कि किस आयु से उसका अपना अलग कमरा है। वो मम्मा-पापा की अकेली बेटी है, बचपन से अकेले अपने कमरे में सोती रही है, उसकी हर चीज अपनी अलग रही है। उसके कमरे में अपना टीवी था जब उसका मन होता, तो जो चैनल मन होता देखती, जब मन होता पढ़ती, देर रात तक मोबाइल पर दोस्तों से बातें करती, वो तो केवल तौलिया लपेट कर ही बाथरुम से आ जाती जिधर मन होता जैसे मन होता कपड़े रखती ऐसे मे किसी और के साथ कैसे रहा जा सकता है । श्रेष्ठा के साथ रहने की सोच कर भी उसे टेंशन हो रहा था। कमरे में जाते समय अर्चिता सोच रही थी कि पता नही कैसी होगी उसकी रूम मेट। जब ढूंढते हुए वह कमरा नम्बर ३४ में पहुंची तो श्रेष्ठा अपना सामान लगा रही थी।

अर्चिता ने कहा “मैं अर्चिता गिडवानी बैंगालूरु से” श्रेष्ठा से परिचय हुआ तो कुछ घंटों में दोनो इतनी खुल गयीं मानो वर्षों से जानती हों। पर दोस्ती अपनी जगह और साथ रहना अपनी जगह। अर्चिता बिल्कुल बिंदास थी, उसे किसी की परवाह नही थी, जो मन आये करती थी उसको देर तक सोने की आदत थी और श्रेष्ठा सुबह जिम जाती थी। वह पांच बजे ही खटर-पटर करके अर्चिता की नींद डिस्टर्ब कर देती। अर्चिता रात में पढ़ना पसंद करती तो श्रेष्ठा को रात में लाइट जलाने पर नींद नहीं आती। अर्चिता को हर समय लाउड म्यूजिक पसंद था वह कमरे में चलती भी तो संगीत की धुन पर थिरकती हुई और श्रेष्ठा को शांति पसंद थी। रोज ही दोनों का किसी न किसी बात पर झगड़ा हो जाता। किसी तरह दोनों ने एक साल काटा क्योंकि बीच मे कोई परिवर्तन उनके हॉस्टल के नियमानुकूल नही था।

साल समाप्त होत-होते अर्चिता ने मम्मी-पापा से शिकायत कर-करके उनकी नाक में दम कर दिया, अंततः उन्होंने उसके रहने के अकेले कमरे के लिये आवेदन दे दिया। एकल कमरा महंगा था तो क्या हुआ लाडली बेटी अर्चिता की कठिनाइयों को देखते हुये मम्मी-पापा को अधिक आर्थिक बोझ उठाना ही था। अकेला कमरा लेकर ही अर्चिता को चैन मिला वह अपनी सुविधानुसार जागती, सोती, पढ़ती। अपने हिसाब से कमरे में सामान रखती ।

धीर-धीरे हास्टल का जीवन उसे रास आने लगा था। यहां तो घर से भी जादा स्वतंत्रता थी। फर्स्ट इयर में अर्चिता, मम्मी-पापा और घर को जितना मिस करती थी अब वैसा नही था। समीकरण बदलने लगे थे पहले उसका मन हर छुटटी में घर की ओर भागता था, मम्मी पापा समझाते थे “बेटा इससे तुम्हारा पढ़ाई का नुकसान होगा।”

पर दूसरा साल आते-आते उल्टा हो गया, मम्मी-पापा कहते आ जाओ, तो उसे हर बार घर न जाने का कोई न कोई बहाना ढूंढना पड़ता। हांलाकि उसका इंतजार कर रहे मम्मी-पापा से झूठ बोलना उसे अच्छा नही लगता, पर यहाँ कालेज में आपस की प्रतियोगिता का सामना करने के लिये बढ़ता पढ़ाई का दबाव और साथ ही नई दुनिया का आकर्षण उसके अपराधबोध को दबा देते।

यूं ही कब सात सत्र बीत गये पता ही न चला, कैम्पस चयन के लिये कम्पनियाँ आनी शुरु हो गयी थीं। इस बार तो दीवाली पर भी जाना टल गया। दीवाली के अगले दिन मम्मी का भावुक सा मेल आया। उन्होंने लिखा था कि ‘तुम्हारे बिना बिल्कुल अच्छा नही लगा जैसे ही तुम्हारे इन्टरव्यू का सिलसिला समाप्त हो कुछ दिन के लिये आ जाओ।’ अर्चिता भी सोच रही थी कि एक बार किसी अच्छी कम्पनी में उसका चयन हो जाये तो कुछ दिनों के लिये घर पर आराम करेगी और मम्मी पापा के साथ समय बितायेगी।

अर्चिता में मेधा, असाधारण व्यक्तित्व, आत्मविश्वास का संयोग था उस पर से सभी सत्र में उत्कृष्ट अंक भी आये थे। कालेज के सहपाठी, प्रोफेसर सभी का मानना था कि सबसे अच्छा अवसर तो अर्चिता को ही मिलने वाला है। उनका अंदाज गलत न था, अर्चिता का चयन ‘लार्सन एण्ड टुब्रो’ में हो गया था, उसकी प्रसन्नता का ठिकाना न था उसने तुरंत मम्मी पापा को फोन किया।

“मम्मी मेरा सेलेक्शन बेस्ट पैकेज देने वाली कम्पनी में हुआ है”, यह सुनकर मम्मी की तो प्रसन्नता के आवेग में आवाज ही रुद्ध हो गई पापा ने गर्व से कहा “बेटा आई एम प्राउड फादर।”

जब अर्चिता ने बताया कि उसकी कम्पनी की एक ब्रांच बैंगालूरु में भी है तो बेटी को तरसते मम्मी-पापा को मानो मन मांगी मुराद मिल गई हो। उन्होने कहा “बेटा शायद ईश्वर हम पर मेहरबान है तुम बस यहीं की पोस्टिग ले लो।”

अर्चिता बहुत प्रसन्न थी मम्मी-पापा की खुशी देख कर उसे लग रहा था मानों उसने कोई अमूल्य निधि पा ली हो। अपने छात्र जीवन से विदा ले अर्चिता आज अपने घर वापस आ गई ।

अपनी सफलता की यात्रा के बारे में सोचते-सोचते घर का गेट आ गया अर्चिता ने चीं की आवाज के साथ तीव्र गति से दौड़ती गाड़ी का ब्रेक दबाया और साथ ही कार के हार्न चार पांच बार दबाकर मम्मी को हड़बड़ा दिया ।

किचेन से लगभग दौड़ लगाती हुई मम्मी ने झींकते हुए कहा “अरे थोड़ा सब्र करो इतनी दूर आने में समय लगता है, हार्न बजा-बजा कर पूरा घर सिर पर उठा लिया।”

"अरे मम्मा ये जेट युग है फ़ास्ट लाइफ में ही फ़न है।" अर्चिता ने मस्ती में कहा और सीधे फर्स्ट गियर से थर्ड गियर ले कर गाड़ी झम्म से लाकर पार्क कर दी।
पहले दिन जब वह नौकरी के लिये निकलने लगी तो मम्मी ने दही पेड़ा खिलाया ।अर्चिता को मीठा वैसे ही नही पसंद उस पर पेड़ा तो बिल्कुल नहीं उसने मुँह बनाया तो मम्मी ने कहा "यह शुभ होता है जीवन की इतनी बड़ी शुरुआत करने जा रही हो तो मुँह तो मीठा होना ही चाहिये"।
यहां तक तो ठीक था पर जब मम्मी ने रोली का टीका लगा दिया तो अर्चिता अपनी खीज रोक नहीं पाई "क्या मम्मी वेस्टर्न ड्रेस के साथ आफिस में टीका लगाकर जाएंगे कुछ तो सोचा करिये।"
"पर बेटा यह शुभ है।"
"शुभ माई फुट आफिस के कुछ नार्म होते हैं, अब टॉवेल दीजिये तो पोछें, आल रेडी देर हो गई है।"
उसका मूड ऑफ हो गया। वह पहले दिन मम्मी से ऐसे बोलना नहीं चाहती थी पर क्या करे उन्हे भी तो समझना चाहिये कि कारपोरेट के कुछ नार्म्स होते हैं।
शाम को जब वह आफिस से लौटी मम्मी को खुश करने के लिये आते ही उनके गले लग गई और बचपन की तरह कान पकड़ कर बोली "सॅारी।" मम्मी हंस पड़ी तनाव दूर हो गया ।
अर्चिता सुबह ब्लैक टी पीती थी पर मम्मी को यह बात किसी भी हालत में गले न उतरती कि इस आयु में ही दूध चीनी छोड़ दे। इतने दिमागी काम के बाद तो सेहत के लिये खाली दूध की चाय पीनी चाहिये। वो उसके मना करने पर भी रोज दूध की चाय बना देती, उसकी एक न सुनती।
उस दिन एक महत्वपूर्ण मीटिंग थी उसे आफिस में देर हो गई, इस बीच पापा ने कम से कम चार बार फोन किया, उसको कितनी शर्मिंदगी हुई, पता नही पापा क्यों नही समझते कि वो अब बच्ची नही है । हैदराबाद में तो ज्यादातर वह आफिस के बाद दोस्तों के साथ काफी पी कर गप्प मार कर आराम से घर आती थी। यहां तो तुरंत घर भागती है नहीं तो मम्मी पापा फोन करना शुरु कर देंगे। मीता और सलिल ने तो उसका नाम ही 'मम्मास बेबी' रख दिया था ।
एक दिन वह अपने कमरे में गाना सुन रही थी कि पापा ने आवाज दी "बेटा तुमसे मिलने कोई मिस्टर रवीश मल्होत्रा आये हैं।"
'ओह गॅाड वो तो भूल ही गयी थी कि उसके बॅास ने आज आने को कहा था।' उसने पापा से कहा "पापा आप उनको बैठाइये, मैं आती हूँ।"
जब वह आयी तो पापा मिस्टर मल्होत्रा से पूछ रहे थे "अच्छा तो आप दिल्ली के हैं, मैं भी वहीं का हूँ, मेरा पुश्तैनी घर चांदनी चौक के पास है।"
अर्चिता को पापा का इस तरह उसके बॅास से पर्सनल होना अच्छा नही लगा। उसने बात को काटते हुये कहा "सॅारी सर आप को वेट करना पड़ा।"
"नहीं-नहीं इट्स आल राइट"।
"अरे बेटा मिस्टर मल्होत्रा दिल्ली के ही हैं"।
अर्चिता बात बदलना चाह रही थी और पापा समझ ही नही रहे थे। वह समझ रही थी कि रवीश पापा की कम्पनी में इजी होकर बात नहीं कर पा रहे हैं। उसने पापा को इशारा करने की कोशिश की पर पापा समझ ही नहीं पा रहे थे ।
उस दिन पापा पूरी देर वहीं बैठे रहे, वो क्यों नही समझते कि उनके सामने उसके फ्रेंड्स असहज अनुभव करते है। बाद में जब पापा पर नाराज हुई तो बजाये बात समझने के वो उल्टे उस पर ही नाराज हो गये। कहने लगे "मैंने ही तुम्हे सब कुछ सिखाया और आज मैं ही आउटडेटेड हो गया?"
पापा तो पापा मम्मी जो सदा ही उसकी बात समझती थी अब उन्हें भी पता नहीं क्या हो गया है, मम्मी अभी भी उससे पहले वाली अर्चू की तरह ही व्यवहार करती हैं, हर बात में बीच में आ जाती हैं। उस दिन वो वह नहा कर निकली तो मम्मी उसके मोबाइल में मैसेजेस देख रही थीं अर्चिता ने लपक कर मोबाइल छीन लिया और कहा "मम्मा हाउ कैन यू डू दिस?" तो कहने लगीं "अरे मुझसे क्या छिपाना मम्मी हूँ तेरी, माँ तो बेटी की दोस्त होती है।"
अर्चिता उन्हें कैसे समझाती कि मम्मी-मम्मी ही होती हैं एक सीमा के बाद उनसे बातें शेअर नही की जा सकती। आज कल अपनी मित्र मंडली में तो वो लोग गाली दे कर बात करते हैं यही आज का बिंदास स्टाइल है, अब मम्मी के सामने तो वो सब नही बोल सकते न?
यहाँ तो अगर रवीश, करण या विशाल से लम्बी बात कर लेती तो वो कहती "बेटा अगर तुम्हे पसंद है तो बताओ मैं उसके घर वालों से बात करूँ।"
अर्चिता कितनी बार उन्हें समझा चुकी थी कि ये सब केवल मित्र हैं। अब तो पापा भी उसे शादी के लिये पीछे पड़े रहते हैं। एक दिन हद ही हो गई उसने अलमारी खोली तो पाया कि अलमारी किसी ने डिस्टर्ब की है। वह चीख पड़ी, "मम्मी आपने मेरी अलमारी छुई है?"
"हाँ कितनी तो उलझी थी, तुझे तो समय नहीं मिलता, मैंने सोचा मैं ही ठीक कर दूँ" गुस्से में अर्चिता ने पूरी अलमारी उलझा दी।
"मम्मी मैं अब छोटी बच्ची नही हूँ, प्लीज मुझे मेरे हाल पर छोड़ दो।"
अब उसे अनुभव हो रहा था कि यहां पोस्टिंग लेकर उसने कितनी बड़ी भूल की। जब मीता ने सुना तो उसने उसे अलग घर लेने की सलाह दी और एक दिन मम्मी पापा के हर बात में इन्टरफेयरेंस से परेशान होकर अर्चिता ने एपार्टमेंट ले ही लिया ।
मम्मी पापा के लिये यह एक बहुत बड़ा धक्का था। जिस बेटी के लिये उनका पल-पल न्यौछावर था, वह उसी शहर में अलग घर ले कर रहेगी। जिसमें उनकी एक-एक सांस बसती है उसके लिये वो अवांछित हो गये हैं। यद्यपि घर छोड़ते समय उनका उतरा चेहरा, अर्चिता को द्रवित कर रहा था पर उसे स्पेस चहिये था अतः उसने अपनी भावनाओं पर ताला लगा कर नये घर में शिफ्ट कर लिया ।
मम्मी-पापा अब जब कभी मिलते तो उसको विवाह के लिये जोर डालते। अर्चिता बिगड़ जाती, एक दिन उसने कह ही दिया "अब मैं बड़ी हो गई हूँ प्लीज मुझे मेरे हिसाब से जीने दीजिये , मैं किसी बंधन में नही बंध सकती।" उस दिन के बाद मम्मी पापा ने उसके जीवन के बारे में बोलना छोड़ दिया, बस कभी- कभी उसका हाल पूछ लेते ।
इधर कुछ दिनों से अर्चिता और मलय की दोस्ती कुछ ज्यादा ही हो गई थी। अर्चिता ने एक दिन बातों-बातों में उससे कहा "मलय तुम्हें नही लगता कि हम लोग एक दिन भी न मिलें तो मिस करते हैं"
"हाँ आज-कल हम लोग एक दूसरे की कम्पनी कुछ ज्याादा ही इन्जाय करने लगे हैं,पर कहीं तुम हमारे साथ शादी-वादी के सपने तो नही देखने लगी हो?"
"नो वे" अर्चिता ने तपाक से कहा।
मलय ने नाटकीय ढंग से सीने पर हाथ रख कर कहा "थैंक्स गाड, मैं तो डर गया था कि मेरा शादी का मूड न देखकर तुम मिलना ही छोड़ दोगी।" "कम आन तुमने मुझे वही ट्रेडिशनल बोर समझा है क्या? बल्कि मुझे तो डर था कि कहीं तुम शादी का राग न ले बैठो और सपने देखने लगो कि मैं सुबह-सुबह आदर्श बीवी की तरह चाय ले कर तुम्हे उठाउंगी"। दोनो खिलखिला कर हंस पड़े ।
अन्ततः दोना ने बिना बंधन के साथ रहने का निर्णय किया। कितना सुविधाजनक लगता था मलय के साथ रहना, न सास-ननद का झंझट न दूसरे के हिसाब से समझौते की समस्या। दोनों ने रहने के पहले ही तय कर लिया था कि दोनो एक दूसरे के जीवन में दखल नही देंगे और मलय ने इस शर्त को पूरी तरह ईमानदारी से निभाया था। उनके कमरे अलग अलग थे कोई किसी के कमरे में नही जाता था। जब दोनों को उनकी स्वाभाविक इच्छा पूर्ति करनी होती पास आते फिर अपना काम, अपना जीवन। एक घर में रह कर भी दोनो अजनबी की तरह रहते। दोनों के कॅामन मित्र आते, तो कभी-कभी उनके अपने-अपने

मित्र भी आते। पर इधर न जाने क्यों कुछ बार से जब मलय की लड़की मित्र आतीं और वो लोग मलय के कमरे में देर तक हंसती खिलखिलाती तो अर्चिता को सहन नही होता। वह चाह कर भी कुछ नहीं कह पाती आखिर उसी ने तो अपनी अपनी स्वतंत्रता और दूसरे के जीवन में दखल न देने की शर्त रखी थी।

न चाहते हुए भी उसका मन एक बंधन में बंधा जा रहा था, प्यार के बंधन में। पर उसका अहम् यह सच स्वीकार नही करना चाहता था फिर उसी ने तो शर्त रखी थी बड़ी बड़ी बातें की थी निज स्वतंत्रता को लेकर। उसने मलय को प्यार के बंधन में बांधना चाहा पर वह तो उड़ता पंछी था उसे यह स्वीकार नहीं था।

इधर मलय की मित्र रागिनी प्रायः आने लगी थी। उस दिन जब वह रात में भी रुक गई तो बात अर्चिता के लिये असहनीय हो गई वह रागिनी की उपस्थिति में ही बिगड़ गई। एक बार जो बहस शुरू हुई तो बात इतनी बढ़ी कि मलय उसी समय अपना सामान ले कर उसे छोड़ कर चला गया।

इस आघात के बाद उसे मम्मी-पापा की बहुत याद आयी, मन किया कि उनके पास चली जाये। जबसे वह मलय के साथ रहने लगी उन लोगों ने उससे नाता ही तोड़ लिया था। पर उसे विश्वास है कि वो उन्हें मना लेगी, पर वो ये भी जानती है कि मम्मी-पापा के साथ रहने लगी तो उनकी रोका-टोकी और वर्जनाओं को झेल नहीं पाएगी उससे तो अकेली ही भली।

वह सो ही रही थी कि मोबाइल बज उठा उसने आधी नींद में मोबाइल उठाया, उधर से मनी की आवाज थी, "हैप्पी बर्थ डे टू यू......"

यह सुन कर अर्चिता चौंक गई। 'क्या आज १५ सितम्बर है?'

उसका कोई रिस्पान्स न पाकर मनी ने कहा "क्या हुआ तू ठीक तो है न?"

अर्चिता ने चौंक कर कहा "हाँ, हाँ, थैंक्स"

"और बता कहाँ पार्टी रखी है ?"

"पार्टी? वो क्या बतायें यार, आज मैं आफिस की मीटिंग में व्यस्त हूँ।" उसने मनी से तो बहाना बना दिया पर सच तो यह था कि उसे याद ही नहीं था कि आज १५ सितम्बर यानि कि उसकी बर्थ डे है, कहां रात के बारह बजे से ही उसके दोस्तों के फोन का तांता लग जाता था और हंगामा शुरू हो जाता था और आज वह इतनी व्यस्त हो गई है कि उसे स्वयं ही याद नही कि उसका बर्थ डे है। सारे मित्र अपनी अपनी दुनिया में व्यस्त हो गये हैं यहां तक कि मम्मी पापा ने भी फोन नही किया।

आज वह चालीस की आयु में कम्पनी की सी.ई.ओ. है, उसके पास नाम है पद है, सुख सुविधा की सारी चीजें हैं वो सदा ही अपने बर्थ डे पर शानदार पार्टी देने के लिये जानी जाती है, पर पता नहीं क्यों आज उसका पार्टी, दोस्त, हंगामे का मन नहीं हुआ। आज उसका आफिस भी जाने का मन नही हुआ उसको कहीं कुछ खोया हुआ सा लग रहा था। उसने फोन पर अपने आफिस में कुछ निर्देश दिये अपने सारे मोबाइल स्विच आफ किये, बाई को छुट्टी दे दी और बिस्तर में जा कर लेट गई ।

तभी काल बेल बजी, अर्चिता सुन कर भी लेटी रही, पर जब बेल बजती ही रही तो हार कर खीज कर उठी। उसने दरवाजा खोला तो मम्मी पापा थे।मम्मी ने आते ही कहा "क्या बात है आज तू आफिस नहीं गई, तुझे विश करने के लिये काल किया तो मोबाइल भी ऑफ था, तबियत ठीक है न?"

"हां मम्मी सब ठीक है बस आराम का मूड था"

"भगवान भला करे, मुझे चिन्ता हो गई थी, इसीलिये आ गई। वैसे तो तेरी पार्टी-वार्टी होगी, तुम लोग कान्टीनेन्टल खाना खाओगे। पर आज तेरा जन्मदिन था, मन नही माना, बचपन में तुझे कचौड़ी और खीर पसंद थी तो बना लाई, अगर इच्छा हो तो यह भी चख लेना।" फिर कुछ ठहर कर बोलीं "बस तेरा मोबाइल नही उठा तो चिन्ता हो गई थी सो आ गई, अब तू आराम कर मैं चलती हूँ।"

मम्मी मुड़ी ही थीं कि अर्चिता के मन ने उसे चेताया "अर्चिता दूर कर ले अपना अकेलापन मम्मी-पापा को रोक ले" उसका हाथ आगे बढ़ा ही था कि उसके मस्तिष्क ने घुड़की दी "भूल गई पुराने अनुभव अब क्या तू रह पाएगी उनके साथ" और उसके स्वयं के घेरे को तोड़ने के लिये बढ़े हुए हाथ शिथिल हो गये।

इंटरनेट के युग में (पृष्ठ १०) का शेष...

हमारे संविधान में हिन्दी को राजभाषा होने का गौरव प्राप्त है और यह हमारी राष्ट्रभाषा भी है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि आज भी देश के अधिकतर छात्र हिन्दी माध्यम से ही शिक्षा प्राप्त करते हैं। वर्तमान समय में आवश्यकता इस बात की है कि छात्रों को विज्ञान की पुस्तकें हिन्दी में उपलब्ध कराई जायें। आज गरीब या मध्यम वर्ग के बहुत से बच्चे ऐसे हैं जो अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में शिक्षा नहीं ग्रहण कर पाते। ऐसा नहीं है कि उनमें ज्ञान की कमी है या सोचने की क्षमता नहीं है लेकिन वे गैर सरकारी स्कूल की ऊँची फीस, मँहगे कपड़े आदि की व्यवस्था नहीं कर सकते। यदि वे विज्ञान को अपनी भाषा में सीखें तो उनकी प्रतिभा का और अधिक विकास होगा। विज्ञान और चिकित्सा किसी देश के विकास में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हिन्दी में भारतीय जनमानस विज्ञान को आसानी से समझ सकता है। विदेशों में विज्ञान को उनकी मातृभाषा में पढ़ाया जाता है। इसलिए आज जरूरत इस बात की है कि हिन्दुस्तान में विज्ञान की शिक्षा हिन्दी में दी जाय। आज जनसंचार और ब्लाग के माध्यम से भी विज्ञान को हिन्दी में लिखकर प्रचारित किया जा रहा है। अनेक विज्ञान की पत्रिकाएँ जैसे आविष्कार, विज्ञान प्रगति आदि हिन्दी में उपलब्ध हैं। इसके अतिरिक्त भी कुछ प्रतिष्ठित विज्ञान की पुस्तकें अनूदित होकर हिन्दी में आयी हैं। अनुवाद में भी गूगल ट्रांसलेटर ने अपनी छाप छोड़ी है जिससे अनेक वेबसाइटों पर अंग्रेजी में उपलब्ध विज्ञान की सामग्री हिन्दी अपनी लोकप्रिय भाषा में पढ़ा जा सकता है। लेकिन इसके लिए छात्रों को कम्प्यूटर की जानकारी होना आवश्यक है। इतने प्रयासों के बावजूद अभी विज्ञान की सामग्री को हिन्दी में उपलब्ध कराने के लिए और अधिक प्रयास करने की आवश्यकता है। बल्कि यह कहा जाय कि आवश्यकता इस बात की है कि जनसाधारण के लिए उनकी भाषा में भी किताबें लिखीं जायें ताकि विज्ञान सभी के लिए लोकप्रिय बन सके।

अन्ततः कहा जा सकता है कि आज की उपभोक्तावादी संस्कृति में हिन्दी हमारे सम्मुख नये रूप में आ रही है और दूर-दराज मे बसे प्रवासी भारतीयों को अपनी संस्कृति से जोड़ रही है। इंटरनेट एक्सप्लोरर, नेटस्केप, मोजिला, गूगल क्रोम, ओपेरा जैसे इंटरनेट ब्राउजर हिन्दी को आगे बढ़ा रहें हैं। ब्लागिंग और मोबाइल ने हिन्दी को और अधिक समृद्ध किया है। यही हाल रहा तो आने वाला समय निश्चय ही हिन्दी का होगा और हमारी राष्ट्रभाषा को विश्वभाषा बनने में अधिक समय नहीं लगेगा। सूचना प्रौद्योगिकी की तरह विज्ञान में हिन्दी अपनी सर्वोच्चता कायम करेगी।

चाबी का गुड्डा

डा. उषादेवी विजय कोल्हटकर, यू.एस.ए.

विश्वविद्यालय के परिसर में पचास से ज्यादा छात्रावास थे। इनके अलावा शादीशुदा विद्यार्थियों को अपनी फैमिली के साथ रहने की सुविधा हो इसलिए 'युनिहर्सिटी हिलेज' नाम का अपार्टमेंट कॉम्प्लेक्स भी था। इस अपार्टमेंट कॉम्प्लेक्स की एक बिल्डिंग के एक बेडरूम अपार्टमेंट में मैं कुछ महीने रही थी। काफी दिनों से खाली पड़े साथ वाले दो बेडरूम अपार्टमेंट में एक विवाहित विद्यार्थी अपनी पत्नी तथा दो साल के लड़के के साथ रहने के लिए आ गए, इस बात से मुझे काफी प्रसन्नता हुई। मुझे छोटे बच्चों से बेहद लगाव है, बच्चे मुझे अच्छे लगते हैं। मेरे स्वभाव की इस कमजोरी ने मुझे, उस नन्हें मेहमान से मिलने पर मजबूर किया। साथ ही उसके माता-पिता से भी परिचय हुआ। उसी शाम उनको चाय पर बुलाया और कुछ ही दिनों में दो साल का केहिन मेरा जानी दोस्त बन गया।

केहिन कि पिताजी गणित विषय में पी०एच०डी० कर रहे थे और माँ कम्प्यूटर साईंस में एम०एस० कर रही थी। दोनों को अपने विषय सम्बन्धी डिपार्टमेंट में पार्ट-टाइम जॉब था। शाम को छः से दस तककेहिन के पिताजी किसी होटल में वेटर का काम करते थे। फीस, मकान का किराया, खाने-पीने का खर्च, बाकी के जरूरी खर्च के साथ एक बच्चा पालने का माता-पिता का ज्यादातर समय घर के बाहर बीतता था, उस दरम्यान केहिन जिस बेबी-सिटर के पास रहता, उसको प्रति घंटे के तीन डॉलर के हिसाब से पैसे देने पड़ते थे। इसलिए केहिन की माँ रविवार के दिन दस-बारह बच्चों की बेबी-सिटिंग करती थी। उद्‌देश्य यह था कि, केहिन के साथ ज्यादा से ज्यादा समय बिता सके। यह उद्‌देश्य कहाँ तक सफल होना था, इस बारे में मुझे शंका थी। रविवार के दिन दस-बारह बच्चे सेंली के घर में जो ऊधम मचाते, वह मैंने अपनी आँखों से देखा था और समय मिलने पर केहिन की माँ की मदद भी की थी।

रविवार की सुबह ग्यारह बजे, बच्चों के माँ-बाप बच्चों को सॅली के घर छोड़ जाते। एक से दः साल के दस-बारह बच्चों की जरूरतें पूरी करना कोई आसान काम तो नहीं। बच्चे बड़भ आशा से सॅली की ओर देखते और वह उनको खुश रखने की पूरी कोशिश करती। दोपहर को एक से डेढ़ के दरम्यान, जो खाना खा सकते हैं, उनको सॅली 'इन्स्टंट लंच' देती थी। ज्यादातर लंच इस प्रकार होता था, सैंडविच, दूध का ग्लास, फोजन मटर के डिब्बे से निकालकर, उबलते पानी में दो मिनट तक उबले हुए मटर या आलू के वेफर्स और एक-आध फल। नन्हें बच्चों को दूध या फलों का रस बोतल से पिलाना, बेबी फूड गरम करके खिलाना, उनींदे बच्चों को सुलाना, रोने वालों को चुप कराना और बच्चों के लिए जो कुछ करना जरूरी है, ऐसी बहुत सारी बातें सॅली को बिना शिकायत के करनी पड़ती थीं। शाम को इन बच्चों का अपने-अपने घर जाने का समय होने तक सॅली मुश्किल से ही केहिन को ज्यादा समय दे पाती। बच्चों को बॉय-बॉय करते ही थकावट महसूस होने लगती। ब्रेड के स्लाईस पर जेली, जैम या पनीर-बटर लगाकर ब्लैक कॉफी के साथ वह शाम का खाना खा लेती। केहिन को नहलाना, बेबी फूड गरम करके उसे खिलाना और उनसे बातें करते-करते उसे सुलाकर जब सॅली पढ़ाई की किताब आँखों के सामने पकड़ती, थकान के मारे उसकी आँखें अपने आप मुँदने लगती। ग्यारह बजे केहिन के पिताजी काम से लौटते तो नींद भरी आवाज में वह पूछती, 'सैम खाना खाओगे?' सवाल के जवाब में जब 'मुझे भूख नहीं' यह सैम के शब्द सुनती तो न चाहते हुए भी उसे राहत महसूस होती थी।

सोये हुए केहिन के फूल से गालों पर चार पल होंठ रखकर सैम 'गुडनाइट किस' का रिवाज पूरा करके सोफे पर ही सो जाता। डिग्री हासिल करने के लिए यह पति-पत्नी जी-जान से मेहनत कर रहे थे, वह सैम में मुझे तारीफ के काबिल लगती थी मगर समय के साथ यह खींचतानी, कदम-कदम पर मजबूरी से भावनाओं के साथ किये हुए तकलीफदेह समझौते देखकर दुख होता था। जाने-अनजाने में केहिन के सुख-दुख उसकी समसयाएँ, मुझे मेरी अपनी-सी लगने लगीं।

व्यक्तिवाद को गले लगाने वाले समाज में विभक्त परिवार को जो अनगिनत समझौते करने पड़ते हैं, उसका एक अच्छा उदाहरण सॅली और सैम के रूप में मेरे सामने था। संयुक्त परिवार में नन्हें बच्चों को पालने की समस्या का सीधा-सादा हल था नानी या दादी। मगर यहाँ तो नानी या दादी को घर में रखने की सिर्फ कल्पना से, घरवालों को साँप सूँघ जाता है। अपने पोते या नाती को पालते हुए, अपनी बुढ़ापे की तकलीफें भूलने वाली, अपने पोते या नाती के छोटे-छोटे कारनामों का, बहादुरी का अथक बयान करते हुए अपने बुढ़ापे की विवशता को खिलखिलाकर हँसाने वाली दादी या नानी सिर्फ पूरब के देशों में बसती हैं, ऐसी मेरी ठोस राय यहाँ के परिवारों के निरीक्षण के बाद बन गई है। लिपिस्टिक का इंद्रधनुष बिगड़ गया तो यहाँ की नानी या दादी परेशान हो जाती है। ग्रांड माँ का यह हाल है तो माँ के नखरों का क्या पूछना!

बिजी टाइम-टेबल को सामने रखकर सैम और सॅली की पढ़ाई की एक टर्म खत्म हुई सैली से पता चला कि छुट्टियों में यह सॅली के भाई के घर जायेंगे। चलो, कुछ दिनों के लिए तो इन दोनों को आराम मिलेगा, इस विचार से मुझे खुशी हुई।

दो सप्ताह बाद मेरा नन्हाँ-मुन्ना दोस्त केहिन लौट आया। दो सप्ताह के लम्बे अरसे के बाद मिला तो उसके सेब जैसे गालों का, मेरे प्यार ने बुरा हाल कर दिया। शिशु के स्पर्श का भी कैसा अपना ही एक अनोखा संसार है, शिशु जैसा ही निश्छल और आमोदकारी। इस स्पर्श को जन्म देने का अगर सौभाग्य प्राप्त हो तो कौन बुद्धि का ह्रास करें, कैसी समाजशास्त्र की पी०एच०डी०, कैसा तर्क, कैसी योजना, कौन सोचे समाजजीवन की स्थिरता के बारे में, लगता है सब मूर्खता का व्यापार है। केहिन के मुलायम, निष्पाप स्पर्श ने मेरी अनुभूति को कहाँ से कहाँ पहुँचा दिया। शायद रोजमर्रा जिन्दगी की नीरसता के परे भी कोई रंगीन दुनिया है, मगर यहाँ

शेष २७ पर...

ढाई अक्खर

स्व. हरचरण चावला, नार्वे

जर्मनी में सरदार टहल सिंह अपनी सिखी के तमाम कक्के उतार कर भी सरदार रह गया था। यह दरअसल ढाई अक्खर जर्मन भाषा सीख कर हाइम नम्बर छह के चीफ का चहेता बन गया था और उसकी ओर से निश्चित अपने कमरे पालों का सरदार।

हमारे कमरे के पांचों लंबे धड़ंगे पंजाबी, जो अपने बापों की जमीने औने पौने बेच कर जर्मनी पहुँचे थे जर्मन तो क्या अंग्रेजी के भी दो शब्द ठीक तरह से नहीं बोल सकते थे।

जर्मन शेफ को उनसे जब बेड का साप्ताहिक किराया वसूली करना होता, कोई बात समझानी होती, उनकी नालायकियों, गल्तियों और गन्दगियों पर चेतावनी करनी होती तो वह उन्हें जर्मनी भाषा में खूब जली कटी सुनाता मगर जब उसकी बदजुबानी और गुस्से पर वे और अधिक आनंदित होने लगते तो वह टहल सिंह को मदद पर बुला लेता और टहल सिंह उसकी कुछ भी बात न समझ कर अपने ढाई जर्मन अक्खरों के सहारे सब कुछ समझ कर सिर हिलाता। अपने पंजाबी भाइयों की ओर बढ़ आता और उन्हें सब कुछ समझा देता। टहलसिंह भी उन पाँचों पर गुस्से ही होता गरजता और बरसता भी अगर साथ ही उनकी घन गरज में ठंडी मीठी फुहार की लहरें भी छुपी नजर आती रहतीं। वे टेढ़े मेढ़े पंजाबी सीधी राह पर आ जाते और जर्मन सेठ की सारी शिकायतें वक्ती तौर पर दूर हो जातीं।

कमरे के सात साथियों में एक में ही पढ़ा लिखा था और किसी न किसी तरह जर्मन सेठ से गुजारे लायक टूटी फूटी अंग्रेजी मिली जर्मन से काम चला लेता था। इसलिए टहल सिंह मुझसे थोड़ा दबता और तमीज से पेश आता। मुझे जर्मनी आए एक महीना हुआ था मगर उन सबमें एक मैं ही बेरोजगार था। इसलिए रात-रात भर बैठा सोचा करता था कि मुझे किस बिच्छू ने काटा था कि अच्छी भली नौकरी छोड़ कर जर्मनी भाग आया। रात को दो या तीन बजे के बाद जब मेरी आँख लगती तो सुबह दस बजे से पहले न खुलती। हाँ बीच में कोई चार पाँच बजे के बीच कुछ शब्द मेरे कानों में जरूर उठते मगर मैं उन्हें अपने ही ख्वाबों की बड़बड़ाहट समझ कर फिर से चादर तान कर सो जाता। कभी-कभी सुर में गाए जाते यह शब्द कुछ साफ भी सुनाई दे जाते, 'ढाई अक्खर प्यार के' टहल सिंह मुझसे अंग्रेजी सीखने के लिए सदा अंग्रेजी में बात करता था मगर हजार कोशिशों के बाद भी उसकी अंग्रेजी उसके अपने ढाई शब्दों तक ही सीमित रहती, "नंदा साहिब! आई टैक्सी, बिग बिग साहब, नई दिल्ली फादर टैक्सी, दिल्ली मेनी मनी, बुक होम। मैं समझ जाता कि वह अपनी इस टूटी फूटी अंग्रेजी से यूरोप से आए सैलानियों को नयी दिल्ली की सैरें कराना होगा। बाप भी उसका दिल्ली का टैक्सी ड्राइवर होगा। अच्छा पैसा और अच्छा घर होगा। फिर उसे न जाने क्या सूझी कि सब कुछ छोड़ कर जर्मनी भाग आया। उसका जवाब खुद मेरी अपनी सूरत में मेरे पास था, मगर फिर भी मैं उससे पूछ ही बैठता, "टहल सिंह व्हाइ यू फेम टु जर्मनी?"

"नंदा साहब! नो जर्मनी... आई इंग्लैंड टैक्सी, फादर दिल्ली टैक्सी... मेनी मनी बुक होम।"

"तो क्या तुम इंग्लैंड जाकर टैक्सी चलाना और अमीर होना चाहते हो?"

वह पहले अपनी छाती पर अंगुली रखता। फिर मेरी छाती पर अंगुली रखकर कहता, "यू नो हिन्दी मी... इंग्लिश ओनली!"

मैं समझ जाता कि अंग्रेजी सीखने के शौक में वह मेरे साथ केवल अंग्रेजी में ही बात करना चाहता है। मैं अंग्रेजी बोलता। वह अगर कुछ भी न समझ पाता तो भी सिर हिलाता। यस, यस, यूं किये जाता जैसे बहुत बड़ा अंग्रेजी दां हो।

बेरोजगारी ने मुझे थोड़ा चिड़चिड़ा बना दिया था और टहल सिंह को इसका पता था, मगर वह मेरी क्या मदद कर सकता था? वह तो खुद बेरोजगार था। एक रात सुबह चार बजे तक मुझे नींद नहीं आई और साढ़े चार बजे करीब गाए जाते कुछ शब्द साफ-साफ मेरे कानों से जा टकराए-पढ़ पढ़ के सब जग मुआ पंडित भया न कोय ढाई अक्खर प्यार के पढ़े सो पंडित होय।

मैंने चादर से मुँह हटा कर देखा। यह टहल सिंह था, जो मुँह हाथ धोकर, कपड़े पहनता हुआ, मुँह ही मुँह में कुछ पवित्र श्लोकों का पाठ करता, कहीं जाने को तैयार हो रहा था। नींद तो मुझसे रूठ ही चुकी थी। मैंने यूं ही पूछ लिया, "टहल सिंह! कहीं जा रहे हो?"

उसे मेरा हिन्दी में पूछना बुरा लगा, मगर मुझे सीधे रस्ते पर लाने के लिए वह अंग्रेजी में बोला, 'आई वर्क..."

"वेअर? कैन यू गेट मी अ जॉब?"

वतन से लाए दिन ब दिन जेबों से निकलते डालर और बेरोजगारी ने मुझे टहल सिंह के आगे झुकने और नौकरी मांगने पर मजबूर कर दिया था। उसने 'वेअर' और 'जॉब' ही के दो शब्दों से अंदाजा लगा लिया कि मैं उससे कोई नौकरी दिलवाने की प्रार्थना कर रहा हूँ। वह बोला, "यू बिग साहब... आई सब्जी मंडी..."

बेरोजगारी मुझे ऊपर से नीचे ले आई थी। मैंने उसे समझाया कि काम काम होता है। काम छोटा या बड़ा नहीं होता। इसलिये वह मुझे अपने साथ सब्जीमंडी ले गया। वहाँ ट्रकों से आलू के बोरे उतारने और अंदर मंडी की दुकानों पर पहुँचाने का काम करता था। उसने ट्रक ड्राइवर से अपने ढाई जर्मन अक्खरों के जरिये मेरी सिफारिश की।

ड्राइवर ने मुझे ऊपर से नीचे तक देखा। मेरे कमजोर जिस्म को देखते हुए एक बार तो मुझे ऐसा लगा कि मैं उसके काम का आदमी नहीं और वह फौरन इंकार कर देगा, मगर न जाने उसे मेरे मरियल जिस्म या बिसूरती शक्ल पर तरस आ गया या टहल सिंह के ढाई अक्खरों ने कोई कमाल कर दिखाया कि उसने मुझे बोरे उतारने पर रख लिया।

दस ही दिन के बाद मेरे जिस्म के अंदर की सिर से पांव तक लटकी हड्डियों की जंजीर कहीं बीच से तिरखी हुई महसूस होने लगी और मुझे लगा कि काम, काम नहीं होता। छोटा या बड़ा होता है और हर काम हर किसी के बस का नहीं होता। ग्यारहवें दिन जब टहल सिंह ने सुबह चार बजे मुझे आवाज दी तो मैंने सुनी-अनसुनी करता बिस्तर में मस्त पड़ा रहा। काम सुबह पांच से नौ बजे तक होता था। उस रोज जब वह वापस आया तो बोला, "नंदा साहब! यू. . ओ..के...?" शायद वह मुझे बीमार समझकर चला गया था। "टहल सिंह! यह काम मेरे बस का नहीं!" "आई टेल... नो गुड वर्क..."

फ्री एंट्री होने की वजह से दरअसल जर्मनी उन दिनों अर्द्ध महाद्वीप पाक व हिन्दी से आने वाले सब पढ़े और अनपढ़े हिन्दुस्तानियों और पाकिस्तानियों का ट्रांजिट स्टेशन था। आए टक आराम किया। कमाकर चार मार्क जेब में डाले और आगे किसी अंग्रेजी बोलने वाले मुल्क को सिधारे। इसलिए कि हर हिन्दुस्तानी और पाकिस्तानी जो खुद अंग्रेजी जानता था और समझता था, सोचता था कि अमेरिका, कनाडा या इंग्लैण्ड के बादशाह या मंत्री हाथों में हार लिये उनकी प्रतीक्षा में खड़े हैं। यह अलग बात है कि इन देशों के कठोर कानूनों और तेज नजर रखने वाले अफसरों से बच-बचाकर कुछ ही लोग पार उतर पाते

थे। हर कोई बिना किसी साथी को बताए अंदर ही अंदर और बाहर ही बाहर प्रयत्नशील रहता और जब एक दिन वह बिस्तर बांधता या शाम को उसका बेड खाली मिलता तो साथियों को पता चलता कि एक पंछी और उठ गया मगर टहल सिंह को अपने ऊपर पूरा विश्वास था कि वह इंग्लैण्ड बड़ी आसानी से सेट हो जाएगा। इसलिए वह इस बात को छुपाता नहीं था। एक दिन शाम के समय वह गड़ोगी के स्टाल पर खड़ा बियर पीता कुछ दोस्तों से गप्पें हांक रहा था। मैं वहाँ से निकला तो उसके 'सत श्री अकाल' का जवाब देने को पल भर के लिए रूक गया। वह उनसे कहा रहा था, "मैं जब पैदा हुआ तो मेरे बाप ने दादा को बताया गुंडा हुआ है। टहलने के शौकीन दादा घर के बगीचे में टहल रहे थे। बोले, "धन्य धन्य वाहे गुरू। तो अपना टहल सिंह आ गया। बसतब से मेरा नाम टहल सिंह पड़ गया। तुम देखना में टहलते टहलते एक दिन लंदन जा बिराजूंगा।"

तीन लड़के तो किसी न किसी तरह कनाडा और अमेरिका की तरफ निकल गये। मैंने भी इंग्लैंड की तरफ एक ट्राइ मारी मगर पहले ही हल्ले में अपने भारी-भारी अंग्रेजी शब्दों के भंडार के बावजूद कस्टम पर ही मार खा गया और वापस जर्मनी लौट आया। फिर न जाने क्या हुआ और कैसे हुआ कि टहल सिंह अपने ढाई अक्खरों के सहारे इंग्लैंड पहुँच गया।

मैं इधर नार्वे पहुँच गया कि तब केवल उधर ही दरवाजे खुले हुए थे। लश्टम पश्टम नई व अंग्रेजी भाषा को गालियां देता, उसका एक एक अक्षर चुनता हुआ कुछ अरसा बाद एक दफ्तर में नौकर हो गया। वह उधर अपने ढाई अक्खरों के सहारे एक बड़े स्टोर का मालिक बन गया। यह मुझे तब पता चला जब वह एक दिन ओस्लो के बड़े बाजार कार्लयूहान जाते पर सैर करता मिल गया।

"अरे टहल?"

"ओ नंदा साहब?"

इन शब्दों के साथ दौड़ कर हम आगे बढ़े और गले मिल गए।

"कहाँ ठहरे?" मैंने पूछा।

"ग्रैंड होटल।" उसने बताया और मैं चौक उठा कि यह ओस्लो का सबसे पुराना और महंगा होटल था।

"मैं यहीं ओस्लो में रहता हूँ। होटल छोड़ो और मेरे साथ चलो," मैंने दोस्ताना पेशकश की। "नहीं बिजनेस के सिलसिले में आया हूँ। मेम भी साथ है। इधर मर्सिडीज में बैठी है। बड़े होटल में जरा बिजनेस में रोब पड़ता है। मिलूंगा जरूर! क्या पता है तुम्हारा?" मैंने कागज पर पता लिख दिया उसने अपने लंदन का खूबसूरत सा एडरेस कार्ड पकड़ाया।

"आपको खत लिखा था, जवाब नहीं आया, तो मैं समझ गया कि आप जर्मनी से निकल गये होंगे।" वह बोला। वह जल्दी में था। मुझे भी दफ्तर पहुँचना था, जहाँ कल ही तीसरी बार पंद्रह साल बाद भी नार्वेजियन भाषा अच्छी तरह न जानने के कारण मैं अपनी अगली तरक्की का केस हार चुका था और आज इस सिलसिले में चीफ से मेरी मीटिंग थी। मैंने दिल ही दिल में नार्वेजियन भाषा में एक मोटी सी गाली दी। वह मुझे सोच में डूबा देखकर बोला, "यू होम आई एंड मेम कम"

पृष्ठ २५ (चाबी का गुड्डा) का शेष...

हर कोई, एक हंगामे का शिकार हो गया है। केहिन को मैंने खूब सारे चॉकलेट और एक चाबी का बजाने वाला, आँखें मूँदने-वाला चाबी की गति का शिकार-एक चाबी का गुड्डा। नई टर्म के साथ पढ़ाई ने भी जोर पकड़ लिया। पढ़ाई करते वक्त, मेरा साथ देने के लिए रातें भी जागने लगीं। रात का साथ अधूरा न लगे, इसलिए, रात में काफी समय तक केहिन का सहम-सहम कर रोना भी सुनायी देने लगा। कभी-कभी सॅली या सैम की आवाज सुनाई देती, दोनों में से किसी ने केहिन को चुप करा दिया, इसका एहसास मिलता और फिर शान्ति से पढ़ाई जारी रहती। एक दिन सॅली मिली तो मुझसे रहा नहीं गया, मैंने उससे पूछा, 'केहिन की तबीयत तो ठीक है न? आजकल रात में देर तक उसक रोना सुनायी देता है।' सॅली का जवाब सुनकर मेरा दिमाग चकरा गया। वह कह रही थी, 'क्या बताऊ उषा, छुट्टियों में मेरे भाई के घर, केहिन को अलग बेडरूम नहीं मिली, इसलिए वह मेरी गोद में सोता था। दो हफ्ते यह कहना पड़ा और उसे मेरी गोद में सोने की आदत हो गई। जब से लौटे हैं, केहिन को अपने अलग बेडरूम में सोना बिलकुल अच्छा नहीं लगता। वह मेरी गोद में सोने की जिद करके रोता है। मेरी गोद में सोने की उसकी इस नई आदत को छुड़ाने के लिए मैं उसकी जिद की तरफ ध्यान नहीं देती, आय लेट हिम क्राय एण्ड ही क्राईज़ हिमसेल्फ टू स्लीप।' सॅली का जवाब सुनकर मेरी नींद उड़ गई। व्यक्ति-स्वातंत्र्य की माँग की जरूरत से ज्यादा महत्व देकर अपने बच्चे को अलग कमरे में सुलाने वाली माँ मेरी समझ में नहीं आ रही थी। अपने व्यक्तित्व के बार में इस हद तक सावधान, सॅली का मातृत्व और माँ की गोद की गरमाहट, ममतामयी स्पर्श के अभाव में पलने वाला केहिन का बचपन मुझसे सहा नहीं जा रहा था।

अचानक केहिन की छटपटाती दिनचार्य मेरी आँखों के सामने आ गई। दो साल के केहिन के लिए भी सॅली ने एक टाइम-टेबिल बनाया हुआ था। उसके मुताबिक सोमवार को वह एक घंटा तैरना सीखता है, तब जरूरी है इसलिए सॅली उसके साथ होती है। स्विमिंग पुल के किनारे से वह उसे फ्लाइंग किसेस् देती है। शनिवार की सुबह नौ से दस के दरम्यान स्केटिंग सीखते वक्त, माँ और उसके बीच कोई हिस्सेदारी नहीं होती। रविवार को सॅली के 'मॉब बेबी-सिटिंग' में कुछ फिसलते स्पर्श और दो-चार पप्पी केहिन को मिलती हैं। रोज रात को उसके डैडी जब चार पल के लिए उसके गालों को छूते हैं, उस वक्त, वह नींद में होता है। सप्ताह के बाकी दिनों में केहिन बेबी-सिटर के मूड के अनुसार जीता है। खिलौने के बन्दर या भालू के साथ बातें करते-करते टी०वी० देखकर जी बहलाता है और यह दो साल का 'अडोअरेबल चाइल्ड' केहिन को अपने माँ-बाप से मिलने वाले समय और साथ का हिसाब लगाती केहिन के बारे में, इस तरह सोचते-सोचते मुझे लगने लगा केहिन एक चाबी का गुड्डा है, सॅली उसे चाबी देती है, वह तैरने लगता है, पिताजी स्पर्श करते हैं, वह सो जाता है। फिर से चाबी देते ही स्केटिंग करने लगता है और चाबी खत्म होने के बाद माँ की ममता भरी गोद की गरमाहट अनुभव करते हुए सोने की इच्छा, नन्हें से दिल में लिए, अपनी इच्छा केवल ठीक से बता नहीं सकता इस मजबूरी से रोते-रोते अकेला ही सो जाता है।

अचानक केहिन का मासूम चेहरा मेरी आँखों के सामने आ गया। खिलौने का एक गोल-मटोल खरगोश अपने सीने से लगाकर केहिन शान्ति से सोया है। नींद में यकायक, वह बहुत ही मीठा-मीठा मुस्कुराया और मुस्कुराते-मुस्कुराते नींद में ही उसकी आँखों में आँसू झरने लगे। मैं एकदम से बोल उठी, 'अरे रोने की चाबी किसने घुमायी?'

हाथी की दुम

डा. गिरिराजशरण अग्रवाल

हमने यह जानकर सचमुच ही दाँतों के तले उँगली दाब ली कि कुछ राजनीतिक दलों के पास अब भी निष्ठावान कार्यकर्ता नामक जीव पाए जाते हैं। खासकर ऐसी स्थिति में, जब कार्यकर्ता सत्ताधारी गुट का हो, और सत्ताधारी गुट चाहे पाला बदलकर ही सत्ता के उड़नखटोले पर क्यों न सवार हुआ हो। यह तो हम जानते ही हैं कि निष्ठा जिस चीज का नाम है, वह सत्ता के साथ होती है, बुद्धिमत्ता के साथ नहीं होती, अवसरवादिता के साथ होती है, निष्पक्षता के साथ नहीं होती। फिर भी जब हमें यह ज्ञात हुआ कि राजनीतिक दलों में आज भी निष्ठावान कार्यकर्ताओं की कमी नहीं है, हम दाँतों तले उँगली दबाए बगैर नहीं रह सके। लेकिन चूँकि भगवान की कृपा से उँगली भी हमारी थी और दाँत भी सौ फीसदी हमारे अपने थे, इसलिए हमारी उँगली सौभाग्य से कट नहीं पाई और सही सलामत बच गई, सो इसलिए हम उँगली कटाकर शहीदों में दाखिल नहीं हुए। हाँ, राजनीतिक कार्यकर्ताओं पर उँगली उठाने और गरीबी मिटाने वाले शहीदों की कुर्बानियाँ करने की स्थिति में जरूर बने रहे।

यह तो आप जानते हैं कि जो कुछ करता है, भगवान करता है, आदमी तो कुछ करता नहीं है। इसलिए एक दिन भगवान जी का करना कुछ ऐसा हुआ कि हमने न चाहते हुए संतोष भाई से पूछ ही लिया-क्यों संतोष भाई। गरीबी हटाते-हटाते आप जैसे सत्ता पक्ष के कार्यकर्ताओं की लोकप्रिय सरकारों ने ज्यों-त्यों करके बीसवीं सदी को तो धता बता दी, पर गरीबी नहीं हटी, सरकारें अवश्य हटती गईं। यह माजरा क्या है? हमारा ख्याल है, उस दिन संतोष भाई कुछ मजाक के से मूड में थे। बोले, अजीब वावले आदमी हो, यार। जब किसी व्यक्ति पर भूतप्रेत का प्रकोप होता है तो क्या आसानी से हट जाता है वो। मौलवी पंडित बुलाए जाते हैं, तांत्रिक बुलाए जाते हैं, पड़कुआ बुलाया जाता है। जादू-टोने वाले बुलाए जाते हैं, जब कहीं जाकर भूत-प्रेत पीछा छोड़ते हैं, रोगी का। इतना कहकर संतोष भाई आगे बोले, तो भाई! यह गरीबी जो है ना, यह भी एक तरह का भूत-प्रेत ही है। यह गरीब देश की गरीब जनता पर हजारों-लाखों वर्ष से सवार है, गरीबों को तंग कर रही है और सरकारों की नाक में दम कर रही है। पर यह तो आप देख ही रहे हैं कि पंचवर्षीय योजनाओं और विकास मंत्रालय के पड़वों द्वारा किए जा रहे टोटकों-मंत्रों की बदौलत गरीबी का यह भूत लगभग तीन चौथाई तो भाग ही चुका है, एक चौथाई रह गया है, वह भी एक दिन भाग ही जाएगा। आप तो जानते ही हैं श्रीमान कि जब हाथी लोटे में से निकलता है तो उसकी पूँछ टेंटू में अटकी रह ही जाती है।

हाथी की पूँछ टेंटू में अटकी रह जाती है! हमने आश्चर्य से संतोष भाई से पूछा, यह तो आपने बड़ी ही अटपटी बात कही। कहाँ हाथी और कहाँ लोटा और कहाँ टेंटू और उसकी पूँछ। आप भी कहाँ पहाड़ को बटुए में बंद करने चले हैं, संतोष भाई!

यह सुनते ही संतोष भाई हम पर सीधा आक्रमण करने पर उतर आए। बोले, हमें लगता है, आप आदमी तो हैं, पर साहित्यिक आदमी नहीं। इसलिए प्रतीकों की भाषा को समझ लेना आपके बूते की खीर नहीं है। एक क्षण रुककर संतोष भाई बोले, जनता जनार्दन जी! यह कुसूर अकेले आपका नहीं है, कुल-की-कुल जनता का है। वह जनता तो है, पर साहित्यिक जनता नहीं है, इसलिए राजनीति की प्रतीकात्मक भाषा को जरा कम ही समझ पाती है।

हमने आपत्ति की, हमारा नाम अकेले जनार्दन है, जनता जनार्दन नहीं। आप गलत संबोधित कर रहे हैं हमें। जरा सुधार करें अपने आप में।

संतोष भाई निर्लज्ज हँसी हँसते हुए बोले, मान लिया कि आप किसी और की भागीदारी के बिना एकदम अकेले जनार्दन ही हो, पर यह लोकतंत्र का युग है। जर्नादन के साथ अगर जनता का दुमछल्ला न हो तो बात नहीं बनती और जब तक बात नहीं बने काम नहीं बनता, इसलिए अगर आपको अपनी बात बनानी है और बात के साथ अपना काम भी बनाना है तो जनार्दन के बदले अपना नाम बताइए जनता जनार्दन। चूँकि जब आप जनता के प्रति नामधारी समर्थन करेंगे तो जनता आपके प्रति भारी भरकम समर्थन करेगी। जनता तो भाई जी, अबोध बालक की तरह होती है, अबोध बालक को हुड़दंग मचाते देख और आप थोड़ा पुचकारकर कहें, हमारा बेटा तो राजा बनेगा राजा और फिर उसके हाथ में झुनझुना पकड़ा दें। आप देखेंगे कि नटखट बेटा राजा तो बना नहीं है, हुड़दंग छोड़कर खिलौना अवश्य बजा रहा है। तो जनार्दन जी, जनता जनार्दन बनकर आप यह गुर तो सीख ही लें, काम आएगा जीवन में।

संतोष भाई ने एक सिद्धहस्त वक्ता की तरह हमें लंबा भाषण पिलाया। यह तो हम जान ही चुके हैं कि राजनीतिक वक्ताओं और कार्यकर्ताओं के पास पीने के लिए जनता-जनार्दन और पिलाने के लिए प्रकाशन और भाषण की कमी नहीं, फिर भी हमने भाई को छूट गई बात याद दिलाते हुए कहा, क्यों संतोष भाई, आपने वह प्रतीकात्मक वाली बात क्या कही थी। कहाँ हाथी, कहाँ लोटा और उसकी टेंटू...।

संतोष भाई व्यंग्यात्मक हँसी हँसकर बोले, अरे जनता माइनस जनार्दन जी। जरा बुद्धि पर जोर दो तो पता चलेगा, जनता के प्रतीक का प्रयोग हम कर रहे हैं, जनसाधारण के लिए और लोटे का प्रयोग कर रहे हैं, गरीबी हटाओ अभियान के लिए। अब आप समझिए कि जनता का हाथी, गरीबी हटाओ के लोटे से तो पूरे-का-पूरा और सही सालिम निकल ही चुका है, बस उसकी दुम लटकी रह गई है, उसकी टेंटू में। अब के कोई जनवादी सरकार आई तो उसकी पूँछ भी खींच खाँचकर निकाल ही देगी टेंटू से। इतना कहकर संतोष भाई थोड़ा चुप हुए। फिर अपनी गलती सुधारते हुए बोले, हाथी की दुम टेंटू में अटकी रहे तो ऐसी कोई चिंता की बात भी नहीं है, क्योंकि जब तक दुम अटकी है तो राजनीति सफलता के शिखर पर लटकी है, यह शिखर से टपकी नहीं कि हम सबकी छटनी हो जाएगी।

संतोष भाई कह चुके तो हमने उनके दावे को निरस्त करना चाहा, इक्कीसवीं सदी के द्वार पर खड़े हैं आप संतोष भाई। अब तो खोखले दावे करना छोड़िए। आप राजनीतिक कार्यकर्ता हैं और वह भी सत्तापक्ष के कार्यकर्ता इसलिए अखबार तो आप पढ़ते नहीं।

आपको क्या पता कि गत वर्ष अक्टूबर में अंतर्राष्ट्रीय गरीबी दिवस मनाया गया था। इसके अगले सप्ताह भारत में गरीबी सप्ताह का धूमधाम से आयोजन हुआ। बैठकें हुईं, विचार गोष्ठियाँ हुईं। सर्वेक्षण कर्ताओं ने गरीबी के बारे में अपनी रिपोर्टें पेश कीं। सभी गोष्ठियों में निरंतर यह सवाल छाया रहा कि गरीबी-उन्मूलन के मुख्य उद्देश्य के बाद देश में अब भी ३६ प्रतिशत गरीबी शेष क्यों है? यानी देश के ६१ प्रतिशत आदमी गरीबी की रेखा से थोड़ा बहुत ऊपर हैं और ३६ प्रतिशत इस रेखा से बहुत नीचे।

हमारा सवाल सुनते ही फड़क ही तो गए संतोष भाई। बोले, अगर हम आपसे यह सवाल करें कि आजादी के पचास वर्षों के बाद भी आपके भीतर ६५ प्रतिशत पाशविकता मौजूद है और ३५ प्रतिशत मानवीयता। तो बताइए क्या जवाब होगा आपका?

हम संतोष भाई का सवाल सुनकर थोड़ा झुँझला गए। बोले, आप साबित कीजिए, हमारे भीतर ६५ प्रतिशत पाशविकता है।

तब पहले आप यह साबित कीजिए कि जनता जनार्दन के भीतर ३६ प्रतिशत निर्धनता यानी गरीबी है और वह कम नहीं हो रही है।

गेंद अपने पाले में आते देख हमारा हौसला बढ़ा, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय आँकड़े प्रमाण हैं संतोष भाई इसका। हमने संतोष भाई को निरुत्तर करने के लिए कहा, आपको याद होगा संतोष भाई, १९९६ में योजना आयोग ने दावा किया था कि भारत की ३६ प्रतिशत जनता गरीबी की रेखा से नीचे है।

हमारी बात अभी पूरी भी नहीं हुई थी कि संतोष भाई ने हमारे नहले पर अपना दहला दे मारा, हमें योजना आयोग वाली बात का पता नहीं तो जनता जनार्दन जी आपको वित्तमंत्रालय के निष्कर्ष का पता नहीं। हम आपकी जानकारी के लिए बता दें। वित्तमंत्रालय का कहना है कि अब देश में कुल १६ प्रतिशत लोग गरीबी की रेखा से नीचे रह गए हैं।

हमने कहा, लेकिन संतोष भाई। आँकड़ों में इतना अंतर कैसे हो सकता है, यह तो बहुत ही आश्चर्यजनक बात है। कहाँ ३६ प्रतिशत कहाँ १६ प्रतिशत। लेकिन वित्त मंत्रालय की बात का विश्वास इसलिए नहीं होता संतोष भाई, क्योंकि सरकारी मंत्रालय तो पालतू तोतों की तरह होते हैं, जो अपने आप मियाँ मिट्ठू बनते रहते हैं, जबकि वे न तो मियाँ होते हैं न मिट्ठू।

न सही मियाँ मिट्ठू। पर अपने पालकों का मन तो बहलाते हैं, बोलते तो रहते हैं, मीठे स्वर में। संतोष भाई ने एक बढ़िया-सा तर्क दिया। तर्क ऐसा था कि हम लाजवाव होते होते रह गए।

वैसे दुनिया की बहुत सारी चीजें लाजवाब हो सकती हैं पर आदमी का लाजवाब होना आसान नहीं है। हमने अपनी लाजवाबी को ठंडा कर चोरी के माल की भाँति छिपाते हुए कहा, लेकिन संतोष भाई, यह तो आपको पता होगा कि राष्ट्रीय आर्थिक अनुसंधान परिषद् ने भी इस साल की अपनी सर्वेक्षण रिपोर्ट में गरीबों की संख्या भारत में ३९ प्रतिशत ही बताई है।

परिषद्-वरिषद् की बात छोड़ो जनार्दन जी। संतोष भाई पूरे आत्मविश्वास के साथ बोले, जरा आप ही बताइए। आपकी ड्योढ़ी पर परिषद् के कार्यकर्ताओं में से कौन माई का लाल हाथ जोड़कर उपस्थित हुआ है। किसने कब आपसे पूछा है, बताइए माईबाप, आप गरीबी की रेखा से नीचे हैं या ऊपर। संतोष भाई अपना यह अचूक दाँव मारकर थोड़ा रुके। फिर बोले, अरे भाई जनता जनार्दन जी, जब इतने वर्षों में अभी तक चीन और भारत के बीच अंतर्राष्ट्रीय सीमारेखा तय नहीं हुई, भारत तथा कश्मीर की विभाजन रेखा तय नहीं हुई तो भई भारत के लोगों की गरीबी की रेखा कैसे तय की जा सकती है? बस आप जैसे लोग तो आँकड़ों के खेल खेलते जाइए और राजनीति लड़ाते जाइए। वैसे हम छाती ठोककर दावा कर सकते हैं कि भारत में अब गरीबी नहीं, हाथी की दुम जरा टेंटू में अटकी रह गई है, वह भी निकल ही जाएगी एक न एक दिन।

झुठलाने को तो संतोष भाई, जगत् के पालनहार को भी झुठलाने से नहीं चूकते हैं लोग-बाग। आप चूँकि सत्ताधारी कार्यकर्ता हैं इसलिए खबरों-समाचारों से कोई वास्ता नहीं रखते, वास्ता रखते होते तो आपको पता होता कि भारत की स्वतंत्रता की पचासवीं वर्षगाँठ के अवसर पर एक संस्था द्वारा जो सर्वेक्षण किया गया है, उससे पता चलता है कि भारत में अब भी लगभग १६ प्रतिशत लोग मात्र तीन रुपए प्रतिदिन कमाते हैं, जबकि १८ प्रतिशत पाँच रुपए प्रतिदिन। लेकिन कुल मिलाकर ५८ प्रतिशत लोग मात्र छः रुपए प्रतिदिन। अब जरा आप ही बताइए, संतोष भाई, जब देश की आधी आबादी केवल तीन से छः रुपए प्रतिदिन की आय पर निर्भर हो, तो क्या गरीबी की यह स्थिति ...।

संतोष भाई ने हमारा वाक्य पूरा नहीं होने दिया। बीच ही में छलांग लगाकर हमारी बात में आ टपके। बोले, आँकड़ों पर न जाइए जनता-जनार्दन जी। आँकड़े भिड़ाने और आँकड़े लड़ाने में कुछ खर्च होता नहीं, किसी दिलजली से आँखें लड़ाने में तो धौल-पूजा का भय भी हो सकता है, पर आँकड़े लड़ाने में किसी प्रकार का कोई भय नहीं।

तो क्या ये आँकड़े गलत हैं संतोष भाई? हमने संतोष भाई से विनम्रतापूर्वक पूछा।

हाँ! बिलकुल! शतप्रतिशत। संतोष भाई बोले, जैसे आँखें लड़ानेवाला अधिकतर स्थितियों में गलत होता है, इसी तरह आँकड़े लड़ाने और भिड़ानेवाला भी अधिकतर स्थितियों में सही नहीं होता। आँकड़े तो आँकड़े हैं। आप स्लेट पर लिखेंगे, मिटानेवाले मिटा देंगे।

लेकिन लिखने वाले और मिटाने वाले दोनों पक्षों में किसी एक के पास तो सचाई होगी, संतोष भाई। हमने बात का निष्कर्ष निकालने के लिए संतोष भाई से पूछा।

सवाल सुनते ही संतोष भाई चहककर बोले, हमारे देश के लोगों का गुण यह है जनता-जनार्दन जी कि वे गरीब हों भी तो गरीबी का ढिंढोरा नहीं पीटते। तीन वक्त के भूखे से भी आप पूछेंगे तो उत्तर में, वह आपसे यही कहेगा-भगवान् का दिया सब कुछ है भाई साहब। आराम से मिल रही है रोटी, कोई चिंता वाली बात नहीं।

संतोष भाई के इस अनुभव में वाकई बड़ी वास्तविकता थी। हमने ध्यान दिया तो याद आया कि कितने ही हमारे परिचित ऐसे थे कि जेब में फूटी कौड़ी नहीं होती थी, किंतु हाँकते रहते थे दून की।

अभी हम सोच ही रहे थे कि संतोष भाई फिर बोले, आप जनार्दन जरूर हैं, पर जनता को नहीं जानते। यहाँ की जनता खुशहाली का प्रदर्शन तो बढ़-चढ़कर करती है, बदहाली का नहीं करती, गरीबी को छुपाती है, मालदारी का दिखावा करती है।

संतोष भाई अपना यह अनुभव व्यक्त कर ही रहे थे कि हमें ऐसे कई सज्जन याद आए, जिन्होंने अपनी पत्नी का मंगलसूत्र बेचकर अतिथियों का आदर-सत्कार किया था, पर अपने-आपको गरीबी की रेखा से नीचे आकर अपमानित होने से बचा लिया था। यह सब याद करते हुए हमने संतोष भाई से कहा - बात तो आप ठीक कह रहे हैं संतोष भाई।

इतना सुनना था कि संतोष भाई जीत का हाथ जोर से छाती पर मारते हुए बोले, जब आप यह मानते हैं कि भारत का गरीब गरीबी का बखान नहीं करता तो आप यह तो सोचिए कि इन सर्वेक्षण करने वालों को कौन ऐसा समाज-विरोधी और परंपरा-विरोधी मिला होगा, जिससे सीना ठोंककर उससे कहा होगा कि हम गरीब हैं और गरीबी की रेखा से नीचे जी रहे हैं। तो आप मान लीजिए कि यह आँकेड़ेबाजी है और आँकड़ेबाजी वाला एक ऐसा काजी होता है, जो शहर के अंदेशे में दुबला होता रहता है।

बात काफी पते की कही थी संतोष भाई ने, पर हमारी पूरी तरह तसल्ली नहीं हुई। हमें लोटे के टेंटू में हाथी की दुम ही अटकी नहीं दिखाई दी, बल्कि पूरा हाथी ही लोटे से बाहर दिखाई दिया।

भारतीय उपन्यास को अभी बहुत लम्बी यात्रा तय करनी है-श्रीलाल शुक्ल

श्रीलाल शुक्ल से साक्षात्कार डा० राजेन्द्रमोहन भट्नागर ने २००० में लिया था।

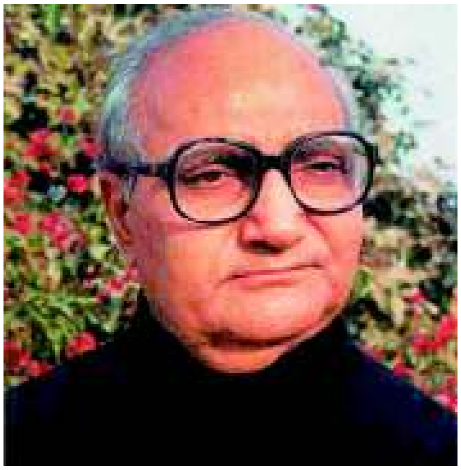

'रागदरबारी' आपका सर्वाधिक लोकप्रिय उपन्यास है। इसी से हिन्दी उपन्यास में व्यंग्य का सार्थक प्रवेश हुआ। इस संदर्भ में मुझे नोबेल पुरस्कार से सम्मानित जर्मन उपन्यासकार हाइनरिख ब्वाइल (Heinrich Boile) का स्मरण हो रहा है। वे अपनी विशिष्ट व्यंग्यात्मक शैली के कारण न केवल सबसे अधिक पढ़े गए अपितु समझे भी गए। उनका साहित्य अपने समय का दस्तावेज माना जाता है।

आपने 'राग दरबारी' के बाद उसी शैली को और धारदार बनाते हुए 'बिश्रामपुर का संत' पेश किया। एकदम आज के विषय-संदर्भ-राजनीति को लेकर उसे व्यंग्य से उकेरा। क्या आप संकेत देना चाहेंगे कि आपके मन के किस कोने में अपने समय की विसंगतियों को व्यंग्य से कुदेरने की बात छिपी हुई थी।

अपने प्रश्न में आपने हाइनरिख ब्वाइल की कृतियों का जिक्र किया। मुझे खेद है कि पाश्चात्य साहित्य में कुछ रूचि रखने के बावजूद मैं अभी तक उनसे परिचित नहीं हूँ। अतः मेरे लिए उनके परिप्रेक्ष्य में कुछ कहना संभव नहीं है।

आपने 'विश्रामपुर का संत' में 'राग दरबारी' की शैली के विकास की छवि देखी है। स्वयं मैं लेखकीय दृष्टि से 'राग दरबारी' और 'विश्रामपुर का संत' में ऐसा कोई साम्य या साम्यतापरक विकास नहीं देख पाता। दोनों की भावभूमियाँ, मेरी समझ में, बहुत भिन्न हैं और इस तथ्य तक पहुँचने के लिए शायद किसी गवेषणा की जरूरत नहीं।

ऐसा जरूर है कि 'मकान' और 'पहला पड़ाव' जैसे मेरे उपन्यासों में व्यंग्य का तत्व प्रखर है। पर वहाँ व्यंग्य के प्रयोग में और 'राग दरबारी' के व्यंग्य में कुछ मूलभूत अंतर है। 'राग दरबारी' में मैंने व्यंग्य की उस शैली का प्रयोग किया है जो प्रायः अखबारी स्तंभों में मिलती है। उसका चरम स्तर पर औपन्यासिक उपयोग मैंने लगभग 'कोलाज' के रूप में किया है। ऐसा सचेतन ढंग से किया गया है-पाठक को जबरन समकालीनता के दलदल में खींचने के लिए। पर 'मकान' या 'पहला पड़ाव' में व्यंग्य उसके ताने-बाने में अनुस्यूत है। वह प्रायः साहित्यशास्त्रीय 'व्यंजना' के रूप में अभिघात्मक या प्रकृतिवादी लेखन के विपरीत प्रयुक्त हुआ है। मुझे लगता है कि व्यंग्य का यह ज्यादा सार्थक प्रयोग है जिसे भारतीय लेखन में फकीर मोहन सेनापति या शरत्चंद्र जैसे लेखक कर चुके हैं। 'नशा', 'गुल्ला डंडा' जैसी कहानियों में प्रेमचंद भी। पश्चिम में सालबेलो या गुंटर ग्रास जैसे लेखक हैं ही जिनके कथा-लेखन में व्यंग्य की प्रखर भंगिमा है। सलमान रूश्दी भी-पर वे 'राग दरबारी' और 'मकान' के बाद के लेखक हैं।

मेरी धारणा है कि प्रकृतिवादी और यथातथ्यवादी शैली की संपूर्ण संभावनाएँ चुक जाने के बाद और भाषा के व्यावसायिक तथा अखबारी प्रयोग की अनाचारिता के कारण अब कविता, नाटक, कथा-साहित्य आदि में व्यंग्य एक अपरिहार्य आंतरिक जरूरत बन गया है और इस प्रवृत्ति को हिन्दी में आज व्यापक स्तर पर लक्षित किया जा सकता है।

रघुवीर सहाय, रेणु, मनोहर श्याम जोशी से लेकर धूमल और आज उदय प्रकाश के बारे में आप क्या सोचते हैं? और अमृतलाल नागर के 'बूँद और समुद्र' से लेकर 'पीढ़ियाँ' तक में अंतर्निहित व्यंग्य?

आप रचना को रूपायित किस तरह करते हैं? आइडिया कहाँ से पाते हैं?

प्रायः एक फ्लैश में, विद्युच्चलत्व में किसी नई-पुरानी स्मृति का बोध कराते हुए कोई घटना, पात्र, स्थिति मन को झकझोरती है। रचना के लिए यह बात निरर्थक-नकली कारतूस जैसी भी हो सकती है, और कभी-कभी वह किसी रचना के आरम्भ का प्रस्थान-बिन्दु भी बन सकती है।

'बिस्रामपुर का संत' की उधेड़बुन में आप कैसे व्यस्त हुए?'

इसका तत्काल सोचा हुआ उत्तर देना मुश्किल है। पर कई गवर्नरों से मेरा जो संपर्क हुआ, उसमें एक अत्यंत कुशल और सार्वजनिक स्तर पर संतुलित होते हुए भी, व्यक्तिगत जीवन में बड़ा क्रोधी और सहसाप्रवृत्ति था, दूसरा असाधारण रूप से महत्त्वाकांक्षी था, तीसरा ऐसा था, चौथा वैसा था-उसी से एक समन्वित चरित्र उभरना शुरू हुआ जो व्यक्तिगत आवेगों और महत्त्वाकांक्षाओं का जटिल समुच्चय जैसा था। कथा की दृष्टि से उसका आकर्षण मुझे इस उपन्यास की ओर खींच रहा था। उससे भूदान के जो प्रसंग जुड़े, वे बहुत हद तक मेरे अनुभव के भी अंग थे। भूदान आंदोलन में मँगरौठ नाम गाँव पहला गाँव था जो ग्रामदान के रूप में विनोबा जी को अर्पित किया गया। यह मेरी मौजूदगी में हुआ। उन दिनों मैं उस क्षेत्र का सब-डिविज़नल मैजिस्ट्रेट था।

क्या लिखने से पूर्व और लिखते समय कभी ऐसा हुआ कि आपके पात्रों ने आपके प्रति विद्रोह कर दिया हो और अपना चरित्र स्वयं बुनने लगे हों?

जी हाँ, ऐसा हुआ है। 'सीमाएँ टूटती हैं' की चाँद और 'पहला पड़ाव' में सत्ते का उत्तर-चरित कुछ-कुछ इसी तरह विकसित हुआ है।

क्या कभी आपने अपने उपन्यासों को लेकर अपने आपसे बात की है?

जी हाँ। अपने उपन्यास को लेकर मैं जितनी कठोर आलोचनात्मक दृष्टि अपना सकता हूँ, न चाहते हुए भी अपनाता हूँ। तभी मुझे प्रत्येक उपन्यास प्रायः चार-पाँच आलेख्यों (ड्राफ्ट्स) के बाद ही स्वीकार्य हो पाता है। अपवाद केवल एक अपराध कथा है : 'आदमी का जहर'। ऐसे खिलंदड़े लेखन के लिए ज्यादा चिंतन की जरूरत नहीं थी। इसे मैंने सत्रह दिन में प्रतिदिन दो घंटे बोलकर लिखाया था, बाद में तीन-चार घंटे इसे सुधारने में लगाये और इस तरह अड़तीस घंटे में लीजिए-जैसे दर्जी एक सूट सिलता है-यह उपन्यास तैयार!

क्या आप उपन्यास शुरू करने से पूर्व उसका ढाँचा बना लेते हैं अथवा जैनेंद्र जी की तरह बिना किसी तैयारी के लिखना/लिखाना शुरू कर देते हैं। प्रायः आप किस समय लिखते हैं और क्या आपको लिखने से पूर्व किसी खास तरह के वातावरण की जरूरत रहती है?

जी नहीं। न तो मैं पूरा-पूरा ढाँचा बनाता हूँ और न जैनेंद्र जी की तरह जैसा आप बता रहे हैं-अंधेरे में

छलांग लगाता हूँ। उपन्यास की केन्द्रीय अंतर्वस्तु मेरे दिमाग में होती है, एक धुंधला कथा-क्रम भी होता है। इस आधार पर उपन्यास शुरू करके मैं विभिन्न स्थितियों को 'इम्प्रोवाइज़' करता हूँ। अगर पहले से ही पूरा कथा-क्रम, पात्र और स्थितियाँ सजी-बजी हों तो उपन्यास केवल एक खानापरी होकर रह जाएगा; रचनात्मक अन्वेषण और उससे उत्पन्न उल्लास की कोई गुंजाइश नहीं बचेगी। माना कि इस प्रकार के लेखन में एक खास किस्म की व्यग्रता है, उल्लास है, पर अनेक संकट भी हैं; फिर भी यह एक अवर्णनीय अनुभव है, इसका संपूर्ण बौद्धिक विश्लेषण कठिन है।

मेरे लिखने का कोई निश्चित समय नहीं। पर अधिकांश रचनाएँ थोड़े समय तक दोपहर के पहले और प्रायः-बाद-में-अपराह्न और शाम में हुई। पर यह मैं अपनी प्रस्फुट रचनाओं के लिए कह रहा हूँ। जहाँ तक उपन्यासों की बात है, 'राग दरबारी' को छोड़कर-जो धीरे-धीरे अलग-अलग घटनाओं को लेकर घर पर लिखा गया। मैं प्रायः लंबी छुट्टी लेकर घर से दूर एकांत में, प्रायः पहाड़ी जगहों में, लिखता रहा हूँ। उन दिनों मैं एक दिन में प्रायः दस-बारह घंटे अपने कार्य में व्यस्त रहता था।

भाषा के लघु प्रयोग। साधु भाषा के प्रयोग की बानगी आपके उपन्यासों में विशेष आकर्षण का केन्द्र है। उससे 'ह्यूमर' अत्यंत प्रभावशाली हो उठता है। क्या आप अपने भाषा-प्रयोग और उसकी पहचान बनाने के संबंध में प्रकाश डालना चाहेंगे?

इस प्रश्न का उचित उत्तर मेरे आलोचक ही दे सकते हैं। मैं केवल एक बात जोड़ सकता हूँ। वह यह है कि रचनात्मक लेखन में अखबारों और राजनीतिक नेताओं द्वारा अवमूल्यित भाषा का हस्तक्षेप उसके लिए सबसे बड़ा खतरा है और मुझे अभास है कि उन्हीं चालू अवमूल्यित शब्दों में नई प्राण-प्रतिष्ठा करके-अपनी अभिव्यक्ति को जटिलता से बचाते हुए-पाठक के निमित्त उसे संप्रेषणीय बनाना दुष्कर कार्य है। इस एहसास के साथ भाषा का प्रयोग लेखक की संभवतः सबसे जटिल समस्या है।

'बिस्त्रामपुर का संत' लिखते समय आपको किन-किन संघर्ष-अतःसंघर्ष से गुजरना पड़ा?

क्षमा चाहूँगा, 'विश्रामपुर का संत' लिखते समय के अनुभवों से गुजरना, उन क्षणों को फिर से जीना एक दुरूह प्रक्रिया होगी। उस प्रक्रिया को अपनाते हुए उन अनुभवों की पुनः रचना या तो अतिनाटकीय होगी या सपाट। किसी भी हालत में वह बहुत प्रमाणिक न होगी। अतः इस प्रसंग पर यहीं पूर्ण विराम।

पश्चिमी देशों में मनीषियों का एक वर्ग उपन्यास के अस्तित्व पर ही प्रश्नचिन्ह लगा चुका है। आपका इस संबंध में क्या कहना है?

पं० विद्यानिवास मिश्र द्वारा गठित श्रद्धानिधि ट्रस्ट के तत्वावधान में ढाई साल पहले मेरे तीन व्याख्यान कथा-साहित्य आदि पर हुए थे जो 'अज्ञेयः कुछ रंग, कुछ रांग' नाम से पुस्तक-रूप प्रकाशित हुए हैं। उपन्यास-साहित्य पर बोलते हुए वहाँ मैंने इस विषय पर कुछ विस्तार से निवेदन किया है। उसे आप देख लें तो इस प्रश्न पर आपको मेरी पूरी प्रतिक्रिया मिल जाएगी।

संक्षेप में मेरा निष्कर्ष यह रहा हैः

वी०एस० नॉयपाल का मानना है कि 'हो सकता है उपन्यास अब उच्चतम साहित्यिक विधा नहीं रहा। उसमें सब कुछ पहले ही हो चुका है; रूस में हुआ, इंग्लैण्ड में, फ्रांस में, दूसरे देशों में हुआ-और यह अधिकांशतः पिछली शताब्दी में हुआ। अब अनुभव और भावना से निपटने के लिए हमें दूसरे तरीकों को देखना होगा।'

स्पष्ट है कि नॉयपाल के ये विचार पाश्चात्य साहित्य के परिदृश्य में भले ही प्रासंगिक हों, हिन्दी उपन्यास के संदर्भ में यहाँ के यथार्थ से बहुत दूर हैं। इस प्रसंग में मैंने जो कहा था उसे मूल रूप में प्रस्तुत करना शायद अनुचित न होगा। मैंने कहा था कि भारत जैसे विशाल मानवीय क्षेत्र के अनुभवों, गहरी भावनाओं, आशाओ, आकांक्षाओं और यातनाओ को हमारा उपन्यास अभी अंशतः ही समेट पाया है। उपन्यास की पूरी संभावनाओं का अभी हमारे यहाँ दोहन होना है। हमारे यहाँ तो अभी तक उस द्वितीय (या तृतीय) श्रेणी के उपन्यास-स्वरूप को भी नहीं उभारा गया है जिससे हेली की 'एयरपोर्ट', 'व्हील', 'होटल' जैसी इतिवृत्तात्मक कृतियाँ शामिल हैं या जान ग्रीशन, राबिन कुक या उनके पहले के फोरसाइथ और ला कार आदि के रहस्य-रोमांच, अतंर्राष्ट्रीय आतंकवाद और गुप्तचरी आदि के शिल्पपूर्ण उपन्यास।

मैं जब व्यावसायिक कोटि के उक्त उपन्यासों की बात करता हूँ तो कृपया मुझे अन्याथ न समझें। वास्तव न समझें। वास्तव में उपन्यास जैसी लोकप्रिय विधा का अनेक स्तरों पर प्रयोग हो रहा है। जहाँ कुछ लेखक साहित्य-रचना के उच्चतम मानदंड लेकर उसकी ओर प्रवृत्त हो रहे हैं वहीं स्वाभाविक है कि कुछ दूसरे लेखक इस विधा की लोकप्रियता को देखते हुए ऐसे उपन्यासों की भी रचना करें जो लोकरूचि के अनुयायी हों। हिन्दी में अभी दोनों प्रकार का लेखन अपनी चरम स्थिति से बहुत पीछे हैं।

सबसे पहली कमी तो हमारे उपन्यासों में चिंतन और वैचारिकता की है। पं० हजारीप्रसाद द्विवेदी के उपन्यास या रमेशचन्द्र शाह का 'पूर्वापर' या कुछ हद तक अज्ञेय और निर्मल वर्मा के उपन्यास-कुल यही उपन्यास इस प्रसंग में याद आते हैं। और न भूलिये, यह उस देश में हैं जहाँ शताब्दियों पहले कठोपनिषद् की रचना हुई जो आज की भाषा में एक प्रखर दार्शनिक उपन्यास माना जा सकता है।

भारत का इतिहास, भूगोल, यहाँ के समाज की विविधता, विभिन्न वर्गों और समुदायों के अनूठे जीवनानुभव, कलाओं और सांस्कृतिक, अनुभवों की विविधता आदि-हमारे उपन्यासों ने अभी इनका हाशिया भर छुआ है। तब कैसे माना जाए कि उपन्यास के अंत का फतवा हमारे लिए किसी भी अर्थ में प्रासंगिक है? हिन्दी उपन्यास ही नहीं, भारतीय उपन्यास को भी अभी बहुत लम्बी यात्रा तय करनी है।

अनेक उपन्यास लेखकों ने यह माना है कि उनके अनेक पात्र उनके जाने-पहचाने हुए हैं। विष्णु प्रभाकर ने 'अर्धनारीश्वर', जैनेंद्र ने 'त्यागपत्र' के प्रमुख पात्र 'मृणाल', 'हाइनरिख ब्वाइल', 'वो वार्स्ट डू आदम' के बारे में ऐसा ही वक्तव्य दिया था। आप 'राग दरबारी' और बिस्रामपुर का संत' के संदर्भ में 'ऑफ दि रिकॉर्ड' कुछ कहिए।

मेरी मानसिकता इस विषय में कुछ ज्यादा जटिल है। मेरे कथा-साहित्य में आज तक कोई भी चरित्र ऐसा नहीं है जो किसी वास्तविक व्यक्ति की जीवनी, स्वभाव या प्रवृत्तियों पर आधारित हो। शायद जिन जीवन-मूल्यों या स्थितियों को अभिव्यक्त करने के लिए मुझे किसी पात्र की जरूरत है, उन्हें व्यक्त करने के लिए कोई भी वास्तविक व्यक्ति मुझे पर्याप्त नहीं जान पड़ता। तभी किसी एक धुँधले व्यक्तिपरक आधार में कई अन्य व्यक्तिपरक आधार में कई अन्य व्यक्तियों और कुछ कल्पनाओं को जोड़कर मुझे अपने मन मुआफिक पात्र की रचना करनी पड़ती है। यही पात्र जब पाठकों की निगाह में एक जीवंत और अत्यंत यथार्थपरक व्यक्ति बनकर प्रगट होता है तो मुझे अपने सौभाग्य पर आश्चर्य होता है। यह सुखद आश्चर्य होता है। यह सुखद आश्चर्य ही शायद कल्पनापरक रचनाकर्म का पारितोषिक है।

मेरे प्रति लोगों का नजरिया बदला है

- कंगना रनौट

राष्ट्रीय पुरस्कार विजेता अभिनेत्री कंगना रनौट, जिन्होंने एक छोटे शहर से निकलकर बालीवुड में नंबर वन अभिनेत्री बनने तक का एक लंबा सफर तय किया, का कहना है कि शुरुआती दिनों की तुलना में उनका आज का संघर्ष बहुत कम है।

कंगना कहती हैं, ''आज मेरे लिए अच्छी भूमिका पाना मुश्किल नहीं है। मैं हमेशा से ही बॉलीवुड में एक बाहरी व्यक्ति थी और हमेशा ही रहूंगी। एक समय था जब मेरे लिए बालीवुड में काम पाना मुश्किल था पर अब ऐसा बिल्कुल नहीं है। अब अलग तरह का संघर्ष है, लेकिन पहले जितना नहीं।''

'ए' श्रेणी की अभिनेत्री बनने के बाद अब कंगना का मानना है कि अभिनेत्री बनना केवल ग्लैमरस होना नहीं है। २८ वर्षीय अभिनेत्री कहती हैं ''मैं ७० व ८० के दशक की फिल्में देखती थी, जिसमें हीरो-हीरोइन चश्में पहनते थे, अच्छे कपड़े पहनते थे, अच्छे दिखते थे और मुझे लगता था कि यही स्टार होना होता है। फिल्मों को लेकर मेरा नजरिया एकदम बाहरी था। पर यह ग्लैमरस नहीं है।

कंगना का मानना है कि बॉलीवुड में टिके रहना मुश्किल है। वे बताती हैं 'बॉलीवड में बने रहना इतना आसान नहीं है। बॉलीवुड दुनिया की बड़ी इंडस्ट्री में से एक है। फिल्में बनाने में बहुत पैसा लगता है। तकनीक का इस्तेमाल करना, अभिनेताओं को लेना, दर्शकों तक उसे पहुंचाना, यह एक कठिन व्यवसाय है।'' कंगना ने कहा कि वे अभी बॉलीवुड के शीर्ष पर नहीं पहुंची है। वे बताती हैं 'ये मेरे करियर का शिखर समय नहीं है। हां, 'क्वीन' के लिए राष्ट्रीय अवार्ड मिलने के बाद से लोगों का नजरिया जरूर बदला है।'

क्वीन, गैंग्स्टर, फैशन ,मेट्रो जैसी फिल्मों से बॉलीवुड में धूम मचा चुकी कंगना अब 'तनु वेड्स मनु रिटर्न्स' के साथ एक बार फिर बड़े पर्दे पर धमाल मचाने को तैयार है। (भाषा)

लताजी से मिलना चाहती हैं इन्दौर की सुरीली पूर्वा!

-संजय पटेल

भारतरत्न लता मंगेशकर की जन्मस्थली इन्दौर की सुरीली बेटी पूर्वा कवठेकर एक मध्यमवर्गीय परिवार से ताल्लुक रखती है। पांच बरस की उम्र से ही उसने सुर साधना शुरू कर दिया। पिता प्रदीप और माँ राजश्री कवठेकर की इकलौती बेटी पूर्वा से लताजी के ८७वें जन्मदिवस पर मुलाकात हुई। वह इन्दौर के ओल्ड जीडीसी की बीए द्वितीय वर्ष की छात्रा है।

मैं सुनता कम, सुनाता ज्यादा हूँ - अमीन सयानी

फिल्में मनोरंजन का सर्वश्रेष्ठ साधन मानी जाती हैं व भारतीय फिल्मों की पहचान सिर्फ संगीत से ही विश्वभर में है। मैं १९५१ से संगीत व गीतों की दुनिया में देश व विश्व के श्रोताओं को डुबा रहा हूँ, लेकिन आज का संगीत व फिल्मों का साज संगीत व शायरी से बहुत दूर हो गया है।

सवाल फिल्मों में शायरी व गीतों के बोल संगीत की दुनिया में दर्शकों व श्रोताओं को झूमा देते थे, वे गीत आज भी जरूर हैं। वे मन के मीत थे। लेकिन गत १५-२० वर्षों में फिल्मों का संगीत सिर्फ तन का संगीत रह गया है। बोल पूरी तरह से संगीत का साथ छोड़ चुके हैं। आज संगीतकारों के नाम व गीतों के बोल व उनका अर्थ पूछना पड़ता है। यह बात आवाज के शहंशाह व दर्शकों को 'भाइयों-बहनों' का संबोधन कर मंत्रमुग्ध करने वाले वयोवृद्ध अमीन सयानी ने मुझसे बातचीत करते हुए कही।

अमीन सयानी ने कहा, कि नौशाद साहब कहते थे कि आज का संगीत क्या संगीत है जिसमें मन तो लगता नहीं व तन से कसरत करते हुए युवा पीढ़ी संगीत पर नृत्य करती हैं। शायरी नहीं होने से मिठास खत्म हो गई व मन को शांत करने वाली गुनगुनाहट ही खत्म हो गई।

रेडियो सिलोन व विविध भारती तथा विश्व के अनेक रेडियो व टेलीविजन से बिनाका गीतमाला, कोलगेट-सिबाका गीतमाला, एस. कुमार का फिल्मी मुकदमा एवं फिल्मी मुलाकात, बोर्नविटा क्विज प्रतिस्पर्धा, बाजीमार सुप्रीम जोड़ी, मराठा दरबार, संगीत के सितारों की महफिल जैसे लोकप्रिय रेडियो व टेलीविजन कार्यक्रमों में लगातार संगीत का लुत्फ दर्शकों के दिल जीतने वाले अमीन सयानी का कहना है कि संगीत मनुष्य या दर्शकों को हंसा सकता है, रुला सकता है, भयभीत व गमगीन व सोच में डुबा सकता है। १९५१-५२ से मैंने यह संगीत का सुहाना सफर शुरू किया था व कितने गाने बजाए, कितने श्रोताओं का दिल जीता? गिनना मुश्किल है। रेडियो सिलोन एवं विविध भारती के साथ संगीत की दुनिया

का खजाना खोलने में मो. रफी, मुकेश, लता मंगेशकर, आशा भोंसले, संगीतकार कल्याणजी-आनंदजी, लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल, शंकर-जयकिशन, रवि आदि को वे प्रमुख मानते हैं एवं कहते हैं कि इन बड़े संगीतकारों के साथ खय्याम, तलत महमूद, अलका याग्निक आदि को आप कैसे भूल सकते हैं? वे कहते हैं कि मेरे जीवन में संगीत वो मिठाई थी व है जिसे सब मिल-बांटकर खाते हैं व स्वाद चखते हैं। अमीन सयानी के विचार १९५१-५२ से लगातार ६ दशकों तक सर्वत्र गूंजते रहे। वे संगीत के कई स्कूलों के प्राचार्य सिद्ध रहे, आवाज की दुनिया में भरपूर सम्मान पाते रहे व तालियां बटोरते रहे। संगीत व आवाज की दुनिया का ऐसा कौन-सा पुरस्कार व पद रहा जिसे अमीन सयानी ने सुशोभित न किया हो। आजकल वे कहते हैं- 'मैं सुनता कम हूं, सुनाता ज्यादा हूँ।'

चर्चा में उन्होंने संगीत व स्वर की कई बातों का उल्लेख करते हुए बतलाया कि हम इसे अपने मन से जोड़ी तो मिठास दिखाई देगी, तन तो हिलता रहता है, इसका संगीत से क्या लेना-देना? आजकल की फिल्मों में संगीत व्यायाम के समान है, मौलिकता से बहुत दूर है। सिर्फ १५-२० मिनट की बातचीत में अमीन सयानी वह सब कुछ कह गए जिसकी मैं चर्चा करना चाहता था।

अमीन सयानी का जीवन संगीत व आवाजमयी रूप में एक नजर में-

१९५१ में रेडियो इंटरप्राइजेस से शुरुआत फिर लंका के ब्रॉडकास्टिंग से जुड़ाव, दो बार कोलम्बो की यात्राएं, १९८९ तक सिलोन से नाता, ५४,००० रेडियो प्रोग्राम एवं १९,००० स्पाट आवाज से दिए गए जो लिम्का बुक ऑफ वर्ल्ड रिकार्ड में दर्ज, उपभोक्ता वस्तुएं व उनमें प्रचार में निम्न कार्यक्रम दिए- बिनाका गीतमाला (४२ वर्षों तक), विविध भारती के साथ वर्षों आवाज, एस. कुमार का फिल्मी मुकदमा, बोर्नविटा क्विज कान्टेस्ट, सरहदों के साथी, ७ वर्षों तक बाजीमार सुपरहिट जोड़ी, सितारों की पसंद चमकीले सितारे, संगीत के सितारों की महफिल, अनेक संगीत एपिसोडों का निर्माण, २००९ में आवाज की दुनिया के कारण पद्मश्री सम्मान, आवाज की दुनिया के संदर्भ में फिल्म संसार से जुड़े अनेक सम्मान, पुत्र के साथ देश-विदेश में कई कार्यक्रम व सम्मान प्राप्त किया, ८२ वर्ष की आयु तक ६६ वर्ष फिल्म संसार के लिए गीतों व संगीत संसार की सेवाएं।

किसानों की हौंसला अफजाई, विवेक ओबेराय ने उठाया बड़ा कदम

मुंबई; पिछले कुछ समय से बहलीवुड सितारे महाराष्ट्र के किसानों की सहायता के लिए कदम बढ़ा रहे हैं, जिनमें नाना पाटेकर और अक्षय कुमार शामिल हैं। अब इस कड़ी में विवेक ओबेराय का नाम भी जुड़ गया है, जिन्होंने इनकी हौंसला अफजाई और सहायता के लिए एक कदम बढ़ाया है।

हुआ कुछ यूं कि विवेक ओबेराय अपनी नई फिल्म 'ग्रेट ग्रैंड मस्ती' की शूटिंग पिछले दिनों महाराष्ट्र के पालघर के पास एक गांव में कर रहे थे। इस दौरान विवेक वहाँ के किसानों से मिले तो जाना की वो किसान जंगल की लकड़ियों, टूटे-फूटे सामानों और वेस्ट मेटेरियल से लालटेन बनाते हैं। इसके अलावा वहां के किसान बिना किसी मिलावट के लड्डू और खाने के सामान भी बनाते हैं।

विवेक इन किसानों की मेहनत और काम देखकर बेहद प्रभावित हुए और उन्होंने फौरन किसानों को ७००० लालटेन बनाने के आर्डर दे दिए। लालटेन के अलावा विवेक ने ५० दर्जन तिल के लड्डू बनाने का भी आर्डर दिया। इन लालटेनों और लड्डुओं को विवेक कैंसर पेशेंट ऐड एसोसिएशन के मरीजों और खुद की संस्था देवी फाउंडेशन की लड़कियों में बांटेंगे।

इस पर बात करते हुए विवेक ने बताया कि 'मुझे पूरा भरोसा है कि किसानों की इस तरह से की गई हौंसला अफजाई से उनके हौसले बुलंद होंगे और इसकी जरूरत है।'

आपको बता दें कि हाल ही में महाराष्ट्र सरकार ने विवेक ओबेरहय को 'जन धन- वन धन' योजना का प्रचार-प्रसार करने के लिए चुना है। इस योजना के तहत घरों और छोटे कारखानों को प्रोत्साहन देना और उसका प्रचार किया जाता है। इससे पहले विवेक कैंसर ऐड एसोसिएशन से जुड़कर कैंसर पीड़ितों के लिए काम करते रहे हैं। इसके अलावा विवेक खुद की एक संस्था भी चलाते हैं, जिसका नाम देवी फाउंडेशन है। इस संस्था के तहत महिलाओं के सशक्तिकरण की दिशा में काम किया जाता है और उन्हें इस लायक बनाया जाता है कि वो जमाने के साथ कदम से कदम मिलाकर चलें।

ओस्लो की सड़क पर भीख माँगता दर-दर

सुरेशचन्द्र शुक्ल 'शरद आलोक'

ओस्लो की सड़क पर
भीख माँगता दर-दर।
नशे में धुत हकलाता स्वर।
हार दू स्मो पेंगेर?
(तुम्हारे पास छोटे सिक्के हैं?)
फेम्मेर एल्लेर थीएर!
(पाँच या दस क्रोनर का सिक्का)
कुछ अनसुने, कुछ अनकहे चले जाते
कुछ घूरते, नजर फेरकर
आँखों में बुझे दीपक की लौ
फैलाये अपने पर
भीख माँगता दर-दर।
सर्द हवाओं को चीरता
मन में अधीरता
बरफ को पाँव से ढकेलता
मुँह नाक से निकालता वाष्प सा धुआँ
नाक पोंछती बाहें
जीवन बन खाई और कुआँ
गिरने से बेखबर
निर्भय, निडर
जिन्दगी लिए हथेली पर,
वह भीख माँगता दर-दर।
भीख ही तो माँगते
चोरी तो नहीं करते,
डाका तो नहीं डालते।
कोई मजबूरी रही होगी,
तब बने होंगे
नशे के आदी
लोगों की नजरें
निःशब्द कह जाती हैं
मत दो भीख
समाज के कलंक हैं
मदिरा पियेंगे, नशा करेंगे
अपने को और डुबायेंगे
अपने को मार रहे हैं
कैसी सजा काट रहे हैं?
हाथ में बोतल या नशे की पुड़िया
सबसे धनी देश में
ये भीख क्यों मांग रहे हैं
कैसी सजा काट रहे हैं?
निवेदन से दूर
स्वरों में माँग,
झूमते, घूमते मजबूर
मन में विश्वास
नहीं पश्चाताप।
आहत मन में अनेक घाव लिए
राह देखता
कोई मरहम लगाये आगे बढ़कर
बाहों में भरे कसकर
स्नेह को तरसता
सहानुभूति खोजता
विश्रामगृहों की छतों को छोड़कर
आ गया
ओस्लो की सड़क पर
भीख माँगता दर-दर।

बदलाव

अनिल जनविजय

जब तक मैं कहता रहा
जीवन की कथा उदास
उबासियाँ आप लेते रहे
बैठे रहे मेरे पास
पर ज्यों ही शुरू किया मैंने
सत्ता का झूठा यश-गान
सिर-माथे पर मुझे बैठाकर
किया आपने मेरा मान

मर जाता है वह धीरे धीरे

पाब्लो नेरुदा   अनुवाद - प्रतिभा उपाध्याय

मर जाता है वह धीरे धीरे
करता नहीं जो कोई यात्रा
पढ़ता नहीं जो कुछ भी सुनता नहीं जो संगीत
हँस नहीं सकता जो खुद पर।
मर जाता है वह धीरे धीरे
नष्ट कर देता है जो खुद अपना प्यार
छोड़ देता है जो मदद करना।
मर जाता है वह धीरे धीरे
बन जाता है जो आदतों का दास
चलते हुए रोज एक ही लीक पर
बदलता नहीं जो अपनी दिनचर्या
नहीं उठाता जोखिम जो पहनने का
नया रंग नहीं करता जो बात अजनबियों से।
मर जाता है वह धीरे धीरे
करता है जो नफरत जुनून से
और उसके चक्रवाती जज्बातों से
उनसे जो लौटाते हैं चमक आँखों में
और बचाते हैं अभागे हृदय को।
मर जाता है वह धीरे धीरे
बदलता नहीं जो जीवन का रास्ता
असंतुष्ट होने पर भी अपने काम से
या प्रेम से उठाता नहीं जो जोखिम
अनिश्चित के लिए निश्चित का
भागता नहीं जो ख्वाबों के पीछे
नहीं है अनुमति जिसे भागने की
लौकिक मंत्रणा से जिंदगी में
कम से कम एक बार।
जियो आज जीवन! रचो आज!
उठाओ आज जोखिम
मत दो मरने खुद को आज धीरे धीरे
मत भूलो खुश रहना !!

प्यार का ऐतबार

अशोक अवस्थी

प्यार का ऐतबार कौन करे
मौत का इंतजार कौन करे
हश्र जीने का गर हो रुसवाई
खुद को खुद शर्मसार कौन करे
हुस्ने - मगरूरियत जवानी हो
दर्द का फिर शुमार कौन करे
दिले मकतूल खुद का हो मुजरिम
रूह पर अख्तियार कौन करे
'अशोक' जिस्में -सुकूँ बेहतर है
जहन को बेकरार कौन करे

पूनम 'उज्ज्वल' की दो कवितायें

हिन्दी दिवस

अभिनन्दन की अधिकारी है।
हिन्दी जन-जन को प्यारी है।।
भारत की मिट्‌टी से जन्मी,
गंगा जल से नित्य नहाई।
भारत मां का गौरव हिन्दी,
सन्तों, पीरों ने अपनाई।
सब भाषाओं से न्यारी है।।
हिन्दी जन-जन को प्यारी है।।
बचपन जिसमें नित तुतलाए,
शैशव जिसमें खिलकर फूले।
यौवन गीतों में नित निखरें,
प्रौढ़ न मानस पढ़ना भूले।
हर कण इसका आभारी है।
हिन्दी जन-जन को प्यारी है।।
राम चरित मानस, की माता,
अनगिन छन्द, निबन्ध सुनती।
विद्या न कोई शेष की जिसको,
हिन्दी व्यक्त नहीं कर पाती।
यह हम सबकी हितकारी है।
हिन्दी जन-जन को प्यारी है।।
गुप्त, निराला, पन्त, सुभद्रा,
दिनकर जिसको रूप दे गए।
टण्डन, गोविन्द दास, लोहिया,
जिसकी नैया स्वयं खे गए।
काव्य कुंज की वह क्यारी है।।
हिन्दी जन-जन को प्यारी हैं।।

बरसात एक- दृश्य अनेक

मारबल लगी बड़ी-बड़ी कोठियाँ
कोठियाँ के हरे-भरे लॉन
लॉन मे लगी रंग-बिरंगी छतरियाँ, झूले,
झूले में झूलते हँसते- मुस्कुराते चेहरे।
हां, वर्षा ऋतु
आपके लिए अवश्य आनन्ददायी है।
चलती फिरती सड़क,
सड़क किनारे नालियां,
नालियों के पास कच्ची झोपड़ियाँ,
झोपड़ियों के अन्दर जाता बारिश का गंदा पानी,
पानी पर तैरते बर्तनों को समेटते मुरझाए चेहरे,
उनके लिए बरखा बड़ी दुखदायी है।
सड़क पर दौड़ती शीशे चढ़ी चमचमाती कारें,
कारों में बैठ, पैदल चलने वालों पर,
पानी उछालते, शाय से निकलने वाले,
जी हां, बारिश का मौसम आपके लिए
कितना सुखकर है।
घुटनों-घुटनों तक पानी ,
पानी में डूबा रिक्शा,
रिक्शा में सवारियां,
सवारियों को खींचता रिक्शावाला।
इनके लिए बरसात का मौसम बड़ा कष्टकर है।
दूर-दूर तक पानी ही पानी,
पानी पर चलती नावें,
नावों पर बैठे बाढ़ पीड़ित ,
कुछ बाढ़ पीड़ित छतों व पेड़ों पर,
खाने के पैकेट व सहायता की प्रतीक्षा में
इनके लिए सावन सुखद नहीं।
ठंडी -ठंडी हवा,
हवा व चाय पकौड़ी का आनन्द लेते,
हेलीकाप्टर की आरामदायक सीट पर बैठे,
बाढ़ के नुकसान का जायजा लेते आप।
जी हां, आपके लिए सावन दुखद नहीं।

बिलगरामी की दो कवितायें

जो कभी तुमको भुलाऊँ न भुलाया जाये
नये फूलों से वही खुश्बू पुरानी आये
तेरी यादों के दीये दिल में जलें जब मेरे
मेरी आँखों में घड़ी भर को अँधेरा छाये
मैं तेरी कैद से आजाद हुआ हूँ ऐसे
जैसे इक कैद गुनहगार जमानत पाये
खुश्क आँखों में छलक आयेंगे आँसू फिर से
कैसे होंठों पे जुबाँ कल की हकीकत लाये
तेरी रंगीन अदाओं के हवाले से अब
कहाँ जाऊँ जहाँ दो पल खुशी के पा सकूँ मैं भी
जहाँ कुछ देर अपने दर्द को सहला सकूँ मैं भी
कोई ऐसा ठिकाना हो जहाँ कुछ देर बैठूँ तो
हँसी आये लबों पर और दिल बहला सकूँ मैं भी
बहुत गहरे अँधेरे में मैं अक्सर सोचता हूँ ये
किसी दिन रौशनी बनकर जहाँ में आ सकूँ मैं भी
गगन में जब परिन्दा कोई उड़ता है ऊँचाई पर
तमन्ना दिल में उठती है वहाँ तक जा सकूँ मैं भी

आपकी आवाज हूँ मैं

आपकी आवाज़ हूँ मैं आज भी और कल रहूँगा
जिस व्यथा ने शक्ति छीनी
आप जिसको सह न पाये
जिस व्यथा ने शब्द छीने
आप जिसको कह न पाये
आपकी उस हर व्यथा को गीत गाकर मैं कहूँगा
जिस तड़प ने कर दिए हैं
आपके मृदु होंठ नीले
जिस तड़प ने भर दिए हैं
आँख में आँसू हठीले
उस तड़प के वेग को अब, मैं तड़प कर खुद सहूँगा
जिस हताशा और घुटन में
आपका जीवन पला है
जिस निराशा और तपन में
आपका तन मन जला है
उस निराशा और तपन में, मैं नदी बनकर बहूँगा

अनुपमा पाठक की दो कवितायें

टूटे स्वार्थ की कारा!

चाँद सूरज नहीं थे
तो जगमग था एक तारा,
हे उषा! तुम्हारे आँचल में हो जड़ित सदा उजियारा!!
आसमान के अंक में
है जो भी अद्भुत न्यारा,
वो हर शय बड़ी उदारता से
है नभ ने धरा पर वारा!
हो पर्वतों का तेज़ अचल
या हो कलकल बहती धारा,
जीवन का सन्देश लिए
सृजित प्राकृतिक हर नारा!
सृजन और प्रलय की
महीन रेखा पर चलते जीवन की आस्था से
है हार रहा अँधियारा,
हर क्षण संघर्ष है दृश्यमान
संघर्षरत हर अणु सृष्टि का
अब तो टूटे स्वार्थ की कारा!

स्मृतियों के नाम

तारीखें लौटती हैं
पर वो बीता पल नहीं लौटता!
लम्हा जो बीत गया
वो, बस स्मृतियों में,
बच जाता है
प्रत्यक्ष-प्रमाण से परे मन की हथेली पर,
मेहंदी-सा, रच जाता है
जो लौटे कभी, तो फिर से,
जी लेंगे... लम्हों के धागे से,
तार-तार दामन,
सी लेंगे...
तब तक... चल रहे हैं,
हम बाती-सा... जल रहे हैं ! सुना है
जिन्दगी अंतिम क्षण तक आस है
मौत के इस पार और उस पार भी
केवल और केवल
जीवन का ही वास है
उसी जीवन पर आस्था रख
बिना साँसों का हिसाब किये
हम पल पल जिए जाते हैं
हर बीतते लम्हे को
स्मृतियों के नाम किये जाते हैं!

धर्म

गुरू शर्मा, फ्रेडरिक्स्ताद, नार्वे

धर्म चाहे हिन्दू हो चाहे मुस्लमान हो,
धर्म चाहे कोई भी हो एक बात सिखलाता है !
प्रेम करे जो हर प्राणी से वो इन्सान कहलाता है !
ये हिन्दू ये सिक्ख ये इसाई और ये मुस्लमान है !
क्यों हम लड़ते है धर्मो की खातिर
ये क्यों नहीं कहते की हम इन्सान है !
अरे बनाई जिसने ये धरती ये आसमान
और ये सारी कायनात!
हम उसी की तो संतान है !

नफरतों के दाग

ज्ञानवती दीक्षित

नफरतों के दाग अब बहुत हो चुके
धो डालिए ये गन्दी बदबूदार चादरें
कमरे के बीच उठा चुके दीवारें कई
अब वक्त है उनमें खिडकी बना के देखो
ककहरा सीख लेने से शिक्षित नहीं होते
कबीर के ढाई अक्षर सीखो मेरे भाई
यह देश हमारा है
हमको ही सजाना है।

एक अजीब दिन

कुंवर नारायण

(१६ सितंबर को हिंदी के प्रसिद्ध कवि और मेरे अत्यंत प्रिय कुंवर नारायण जी ८८ वर्ष के हो गए। उन्हें जन्मदिन की बहुत बधाई।)

आज सारे दिन बाहर घूमता रहा
और कोई दुर्घटना नहीं हुई।
आज सारे दिन लोगों से मिलता रहा
और कहीं अपमानित नहीं हुआ।
आज सारे दिन सच बोलता रहा
और किसी ने बुरा न माना।
आज सबका यकीन किया
और कहीं धोखा नहीं खाया।
और सबसे बड़ा चमत्कार तो यह
कि घर लौटकर मैंने किसी और को नहीं
अपने ही को लौटा हुआ पाया।
कमरे मे धूप हवा और दरवाजों में बहस होती रही,
दीवारें सुनती रहीं।
धूप चुपचाप एक कुरसी पर बैठी
किरणों के ऊन का स्वेटर बुनती रही।
सहसा किसी बात पर बिगड़ कर
हवा ने दरवाजे को तड़ से
एक थप्पड़ जड़ दिया !
खिड़कियाँ गरज उठीं,
अखबार उठ कर खड़ा हो गया,
किताबें मुँह बाये देखती रहीं,
पानी से भरी सुराही फर्श पर टूट पड़ी,
मेज के हाथ से कलम छूट पड़ी।
धूप उठी और बिना कुछ कहे
कमरे से बाहर चली गई।
शाम को लौटी तो देखा
एक कुहराम के बाद घर में खामोशी थी।
अँगड़ाई लेकर पलँग पर पड़ गई,
पड़े-पड़े कुछ सोचती रही,
सोचते-सोचते न जाने कब सो गई,
आँख खुली तो देखा सुबह हो गई।

ख्वाबों के समन्दर

श्वेता दीप्ति, काठमाण्डू, नेपाल

तेरी निगाहों ने कहा था बहुत कुछ
बेवजह खयालों में सँवरते चले गए ।
लगा कुछ ऐसा कि जिन्दगी बदल गई
दुनिया से खुद को चुराते चले गए ।
ख्यालों ने दिल पे ऐसा हक जताया
खुद को ही खुद से भुलाते चले गए ।
ख्वाब टूटा तो जाना ये हकीकत न था
जिन्दगी पे दाँव खुद लगाते चले गए ।
गुमाँ था कि कश्ती डूबेगी किनारे पे ही
ख्वाबों के समन्दर को सजाते चले गए ।

मेरी कविता

गुरू शर्मा, फ्रेडरिक्स्ताद, नार्वे

सफलता पानी है जिंदगी में
बेईमानी भ्रटाचार अपना लो!
नेता जो अपराधी है,
कातिल हैं उसको ही जितवालो!
जो मिले सत्कार प्रभु को
ऐसा सत्कार मिलेगा !
भेटे खूब चढ़ेगी और मोटा माल मिलेगा !
आजकल दुनिया में धर्म सबसे अच्छा धन्धा है !
भरती जाए तिजोरिया कभी न पड़ता मंदा है!
नेता अफसर अमीर गरीब
हर कोई इनके आगे झुकता है !
रोज एक नया गुरु टीवी चौनल पर दीखता है !
ऐसे ही बाबाओ के चक्कर में फसते है लोग !
इनको ही है पूजते इनके गीत ही गाते लोग !
झूट बोलकर डरा डरा कर लोगो को ये ठगते है !
अच्छी अच्छी कारों में घुमे
और सिंघासनो पर सजते है !
पढ़ा लिखा हो या अनपढ़ हो सभी इनसे डरते है !
अपने आप पर विश्वास ना करके
इनके चक्कर में पड़ते है !
इनके चक्कर में पड़ते है !

जलजले के बाद

डा० गीता गुप्त

अभी
कल तक जो था
वर्तमान का गौरव-स्तम्भ
देखते ही देखते
धराशायी हो गया।
अब चारों तरफ है
धूल ही धूल
गुबार ही गुबार
घुटी-घुटी चीख
और दबी-दबी सिसकियाँ।
इस खूबसूरत शहर में फँस गया है
अजीब दर्द का समन्दर
चारों तरफ छाई हुई है
भयानक मुर्दनी
और भीतर कहीं गहरे तक
तोड़ देने वाली ऐसी उदासी
जिसे तराश नहीं सकेगी
कोई कोशिश सदियों तक।
हँसते-बोलते घरों की कतार
तब्दील हो गई है खण्डहरों में
जहाँ तक निगाह जाती है
बाहर-भीतर सिर्फ गहरा अंधेरा है
और अव्यक्त सत्ता से एक मौन गुहार।
पता नहीं मानवीय भूलों की सजा है
या एक सभ्यता विलीन होने वाली है
इतिहास में जिसका सूत्रपात है
यह भयावह त्रासदी।
कल तक गर्व से तनी
खिलखिलाती बुलन्द इमारतें
जमींदोज हो चुकी हैं
हँसते-खेलते बच्चे दफन हो गये हैं
मलबों में
इन्तजार करती माँएँ डूब गई हैं चिर निद्रा में
अब कभी न जागने के लिए।

खुले आसमान के नीचे
खड़ी हूँ एकाकी प्रार्थनारत्
अपने शहर में
जो अब खूबसूरत नहीं रहा
जलजले के बाद
जहाँ नहीं रहा अब मेरा घर
सामने पड़ा है उसका अवशेष।
मेरे हाथ नहीं उठते
मलबे में से क्या निकालूँ
क्या सहेजूँ
साथ ले जाने के लिए
कुछ भी तो नहीं बचा साबुत
उन असंख्य स्मृतियों के सिवाय
जो अभी
घर के मलबे में दबी गुँथी पड़ी हैं
और अन्तिम क्षण तक
रची-बसी रहेंगी मेरी साँसों में
बस थोड़ी-सी मिट्टी
उस घर की
अपने हाथों से उठाकर
ले जाना चाहती हूँ साथ
ताकि जब कभी आँखें नम हों
घर की याद में
दिल भर आए
तो उस मिट्टी को चूमकर
अपने अधरों में
दिलासा दे सकूँ खुद को
सह सकूँ अपार दुःख।
(नेपाल में अपना घर भूकम्प में जमींदोज
होने के बाद लिखी गयी कविता।)

Regjeringen signaliserer økt samarbeid med Afrika

SAMFUNNSANSVAR Stortingsmeldingen om hvordan norsk bistand skal bidra til næringsutvikling i Afrika ble lagt frem den 17. juni. Den styrker arbeidet med matproduksjon og satser ytterligere på Afrika som produsent av mat for egne markeder, men også for eksport.

A.Versto/UDBørge Brende møtte FNs generalsekretær Ban Ki-moon i New York 7. juli 2014.

Hvordan ser du på Afrika som mat produsent i dag og i et ti års-perspektiv, og hva ønsker regjeringen å oppnå med endringen skissert i stortingsmeldingen?

- Matproduksjon i Afrika er økende og det er i dag færre som trenger direkte støtte til mat. Dette er en positiv trend som regjeringen vil bidra til. Vi vil styrke fokuset på organisering av produsentene og en helhetlig verdikjedeutvikling.

Bønder opererer i alt for stor grad i et vakuum uten organisering eller tilknytning til verdikjeder hvordan vil arbeidet Norge ønsker å støtte fremover bidra til at flere små bedrifter blir mellomstore, og leverer produkter til sin verdikjede som medspillere og ikke bare produsenter?

- Svake verdikjeder henger ofte sammen med dårlig infrastruktur. 30 prosent av alt som produseres i Afrika i dag går tapt før det når matbordet. Vi skal bidra til å dreie jordbruket fra selvbergingsjordbruk til et mer effektivt, markedstilpasset jordbruk.

I meldingen beskrives det hvordan Den Lille Nøttefabrikken har jobbet med å importere cashewnøtter direkte fra lokale bønder i samarbeid med en cashewfabrikk nord i Mosambik. Hvilken betydning har det at norske bedrifter jobber med lokale partnere i Afrika på denne måten?

- Bistand har de siste årene blitt mindre viktig for mange utviklingsland. I 1990 utgjorde bistand 63 prosent av alle kapitalstrømmer til lav- og lavere mellominntektsland. I 2013 var denne andelen redusert til 21 prosent. Norske bedrifter ser muligheter ute i verden. Vi tror at norske bedrifter har mange muligheter i utviklingsland, samtidig som det har en positiv utviklingseffekt. I tilfelle Den Lille Nøttefabrikken har samarbeidet bidratt til

mange tusen arbeidsplasser i Mosambik. Vi vil ha flere slike eksempler!

Bistandens betydning for land i Afrika blir mindre og direkte investeringer hvor lokale og internasjonale partnere skaper transnasjonale verdikjeder blir viktigere hva blir rollen fremover for norske bedrifter som både vil drive ansvarlig business, men også spille en rolle i Afrikas utvikling?

- Regjeringen forventer at alle norske bedrifter i utlandet skal drive ansvarlig. Mange selskaper opererer i land hvor det er krevende å kjøpe varer og tjenester lokalt. Den lokale verdiskapingen og ringvirkningene for folk flest, blir dermed begrenset. Regjeringen legger stor vekt på at i disse landene har vi et spesielt ansvar for å bidra til en inkluderende økonomisk vekst, slik at flere fattige mennesker kan ta del i den økonomiske veksten. Her har norske selskaper et stort ansvar.

Landbruk blir løftet frem i denne stortingsmeldingen hva er potensialet til Afrikas landbruksproduksjon og hvilke andre sektorer ønsker regjeringen å bidra til å utvikle i årene som kommer?

Potensialet for et produktivt landbruk i Afrika er stort. Utfordringen ligger i utforming av politikk som ivaretar bøndenes rettigheter og stimulere til økt produksjon. I tillegg til landbruk er det fire andre sektorer som vi fokuserer på: energi, IKT, fisk/marine ressurser og maritim sektor.

Med ditt veldig tette reiseprogram når blir din neste reise til Afrika?

Jeg vil delta på giverkonferansen i Etiopia knyttet til «Finansiering for Utvikling.» Dette er en viktig arena for å diskutere spørsmål knyttet til bistandens rolle for å utløse private investeringer og utvikling i Afrika.

Norway backs India's bid for UNSC membership

External Affairs Minister Sushma Swaraj and her Norwegian counterpart Borge Brende, co-chairing the joint commission meeting here, decided to hold a bilateral dialogue on trade and investments to explore untapped opportunities.

External Affairs Minister Sushma Swaraj shaking hands with Norway's Foreign Minister Borge Brende during their meeting in New Delhi.

Samene - et urfolk i Norge

Et *urfolk* er en folkegruppe som opprinnelig bodde i et område før de ble erobret og kolonisert av andre folk. Samene i Norge, indianerne i Amerika og aboriginerne i Australia *(bildet)* er eksempler på slike grupper. Det finnes i dag ca. 400 millioner mennesker som blir regnet som urfolk. Dette utgjør omtrent 6% av verdens befolkning. Alle disse har bevart sosiale, kulturelle og økonomiske trekk som skiller dem fra den dominerende gruppen (majoriteten) i de samfunnene de lever i.

Urfolk har imidlertid lenge blitt undertrykt og diskriminert av dem som erobret landområdene der urfolkene opprinnelig bodde. Mange kjemper i dag en vanskelig kamp for å bevare sitt språk og sine kulturelle tradisjoner. En del urfolk blir heller ikke anerkjent av statene de bor i, og noen av dem står i fare for å bli utryddet. Mange urfolk sliter også med fattigdom og sosiale problemer. Dette har sammenheng med at at de alltid er en minoritet i samfunnet. Derfor sliter mange av dem med å tilpasse seg majoritetens kultur og måte å leve på.

Verdensorganisasjon FN har arbeidet mye med å sikre urfolk spesielle rettigheter som gjør at de kan utvikle sin egen kultur og benytte seg av sine egne landområder. Dette arbeidet har resultert i noen internasjonale avtaler som skal sikre urfolks rettigheter. Det har likevel vist seg vanskelig å få statene i verden til å godkjenne og følge disse avtalene.

Samene er det eneste urfolket i Norge. De bodde mest sannsynlig i Nord-Norge før dette området ble befolket av nordmenn. Samene bor i dag i statene Norge, Sverige, Finland og Russland. Det bor flest samer i Norge, ca. 40 000, men tallet varierer en del etter hvordan man definerer hvem som faktisk er same. Byene Karasjok og Kautokeino i Finnmark er norske byer med et klart flertall av samisk befolkning.

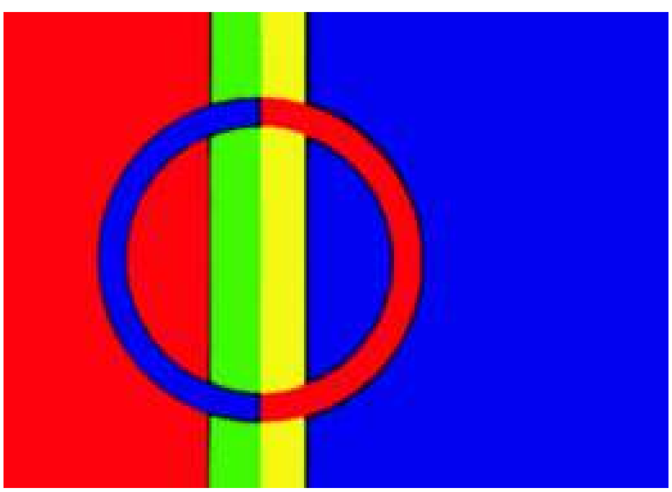

Samenes kultur skiller seg fra den norske på flere områder. De har blant sitt eget språk, samisk. Det er svært annerledes enn norsk, ettersom det tilhører en helt annen språkfamilie enn de nordiske språkene. Det tilhører den uralske språkfamilien, og dermed mer beslektet med finsk og ungarsk enn med norsk.

Samene oppfatter seg selv som en egen nasjon, blant annet ved å ha sin egen nasjonaldag, nasjonalsang og flagg *(bildet)*. De har også egne politiske institusjoner. Sametinget blir valgt hvert fjerde år og gir det norske Stortinget råd i alle spørsmål som berører samene. Det har imidlertid ikke alltid vært slik. Samene ble utsatt for en*assimileringspolitikk* fra midten av 1800-tallet, der de blant annet ikke fikk snakke eller skrive samisk i skolen. Denne politikken ble ført helt fram til etter andre verdenskrig. Mye av bakgrunnen for at politikken mot samene ble endret på nettopp dette tidspunktet har med dannelsen av FN og menneskerettighetserklæringen å gjøre. Det ble et sterkere fokus på blant

annet urfolks rettigheter. Likevel gikk det som vi ser lang tid før samene fikk egne politiske institusjoner. Sammenlignet med de fleste andre urfolk i verden vil det i dag likevel være riktig å si at samene er blant dem som har oppnådd flest rettigheter.

Det tradisjonelle næringsgrunnlaget for samene har vært reindrift *(bildet)*, jakt og fangst. I dag er samene like forskjellige som mennesker i andre moderne kulturer, men de tradisjonelle næringsgrenene er fremdeles svært viktige for samenes identitet. De er blant annet svært opptatt av å bruke og bevare ressursene i naturen.

Den gamle samiske religionen kalles sjamanisme. En sjaman fungerte som en åndelig leder som ved hjelp av en spesiell tromme fikk kontakt med forfedre, natur og guder. Vi forbinder gjerne samer også med egne former for musikk (joik), klær (samedrakter), boformer (lavvo og gamme) og brukskunst (duodji). Det er likevel viktig å huske på at de aller fleste samer også er en integrert del av den norske kulturen, og slett ikke bor i telt eller går med samedrakt til vanlig.

Samer i tradisjonelle drakter, ca. 1890. Samer er eneste gruppe med juridisk urfolkstatus i Norge

FN-dagen og FN 70 år

Av Erna Solberg, Statsminister

Kjære alle sammen,

I år feirer vi ikke bare FN-dagen 24. oktober, men også FNs 70-årsjubileum. I tillegg markerer vi overgangen fra Tusenårsmål til FNs nye bærekraftsmål.

Uavhengig av skiftende regjeringer har FN vært en bærebjelke i norsk utenrikspolitikk. Norge ønsker en verden der rett går foran makt. FN, med sine 193 medlemsland, er en permanent og unik arena for samhandling, samarbeid og konfliktløsning.

FN er omdiskutert, men har gode resultater å vise til. De har bidratt til avkolonialisering, etableringen av det internasjonale menneskerettighetssystemet, utvikling av havretten og fattigdomsreduksjon.

Men FN må også tilpasses en ny tid. 70-åringen må pusses opp! I dag står vi overfor nye globale utfordringer som ingen tenkte på i 1945. Klimaendringene, fremveksten av ulike terrororganisasjoner som ISIL, Ebola-epidemien og et stort antall humanitære katastrofer har satt FN og den internasjonale orden under et enormt press. De fleste globale utfordringer, ikke minst de vanskeligste, havner på FNs bord.

Deltakelsen under årets generalforsamling viste at FN fremdeles er den viktigste og mest sentrale globale møteplassen. Kinas president Xi Jinping og Cubas president Raul Castro deltok i år på FN-toppmøtet for første gang, og Russlands president Vladimir Putin deltok for første gang på ti år. Pave Frans hadde også sitt første FN-besøk.

FN må styrkes både som mellomstatlig arena og som en aktør i egen kraft. Det er medlemstatene som har hovedansvaret for at FN settes i stand til å håndtere dagens og morgendagens utfordringer.

I 2016 skal det velges ny Generalsekretær til FN. Dette gir alle medlemsland en anledning til å tenke gjennom både hvilket FN verden trenger og hva som må til for at FN skal kunne tilpasses en ny tid. Norge vil bidra aktivt i denne prosessen. Gjennom prosjektet "FN70: En ny dagsorden" vil vi fra norsk side bidra til å utvikle konkrete forslag til reform av FN. Kanskje er også tiden kommet for at en kvinne kan ta plass i Generalsekretær-stolen, etter 70 år med mannlige ledere? Det mangler ikke på kompetente kandidater. Churchill fremhevet at FNs «viktigste oppgave og plikt» var å hindre en ny krig. FN har bidratt til å redusere antallet mellomstatlige konflikter etter 1945, men interne konflikter er vanskeligere å

håndtere. FNs generalsekretær har nylig tatt viktige initiativ for å bedre FNs evne til å håndtere konflikter og legge til rette for bærekraftig fred. Norge støtter disse initiativene både politisk og med konkrete bidrag fra forsvaret og politiet.

Når de fem veto-maktene i Sikkerhetsrådet er uenige om hvordan kriser som i Syria og Ukraina kan løses, blir FNs rolle ofte redusert til å avhjelpe - ikke løse - krisene. Vi trenger et Sikkerhetsråd som har full legitimitet hos FNs medlemsland og som reflekterer verdensordenen anno 2015, ikke anno 1945.

Norge og Norden må presse på for et Sikkerhetsråd som i større grad bidrar til forebyggende diplomati og fredsbygging. I lys av dette arbeider vi for det svenske kandidaturet som medlem av Sikkerhetsrådet 2017-2018 og vårt eget kandidatur for perioden 2021-2022.

FN-pakten la grunnlaget for erklæringen om universelle menneskerettigheter fra 1948. Et viktig resultat under FNs første generalsekretær Trygve Lie. Menneskerettigheter gir stabilitet, økonomisk utvikling og fred. Borgerkrigen i Syria begynte med at regimet begikk massive menneskerettighetsbrudd. Verden har i dag et omfattende menneskerettighetsregelverk med bred oppslutning og betydelig gjennomslagskraft takket være FN. Men mye arbeid gjenstår. Stater, ikke minst de store, har sjelden villet la seg binde av overnasjonale normer. Vi må fortsette arbeidet for å beskytte de universelle menneskerettighetene og sikre oppfølging fra FNs medlemsstater.

FN-pakten vier betydelig plass til viktigheten av økonomisk velstand og utvikling. FN-toppmøtet i september var en milepæl fordi verdens ledere vedtok de nye bærekraftsmålene.

Prosessen som ledet frem til dette var kanskje den bredeste og mest inkluderende prosessen FN noensinne har stått for. Samtidig ble det slått fast at tusenårsmålene har vært en suksess, både for global utvikling og for FN. Millioner av liv har blitt reddet. Antall mennesker i ekstrem fattigdom er halvert, det samme er mødre- og barnedødeligheten. Flere jenter enn noensinne går på skolen.

Vi må nå ta et steg videre. Vi kan bli den første generasjonen som utrydder ekstrem fattigdom. Men dette kan ikke skje uten at vi samtidig tar bedre vare på kloden vår.
Bærekraftsmålene forener kampen mot fattigdom med fornyet innsats for å ta vare på miljøet. Målene er universelle og gjelder for alle land, inkludert Norge. Mye av det har vi allerede oppnådd i Norge. Men vi har også våre utfordringer enten det er snakk om matsløsing, fattigdom, forskjeller eller forurensing. Dette vil vi følge opp på relevante områder, gjennom arbeid i etablerte demokratiske prosesser og budsjetter og i nær dialog med likesinnede land i Norden og andre. Og vi vet vi har et aktivt sivilt samfunn,

godt representert her i dag, som vil være med på å gjøre Norge til et enda bedre land å bo i.

Bærekraftmålene skal gjennomføres i et bredt globalt samarbeid, og i partnerskap mellom FN, myndigheter, næringsliv og sivilsamfunn. Norge skal følge opp, både i FN, i regionalt samarbeid, i bilateral bistand og nasjonalt. Behovet for det brede globale samarbeidet

er spesielt viktig når vi møtes i Paris i desember for å få til en ambisiøs avtale som går rett i kjernen på bærekraftsmål 13 om klima.

For å oppnå bærekraftsmålene vil det kreves store ressurser og en effektiv bruk av disse. Gjennom avtalen om Finansiering for utvikling som FNs medlemsland ble enige om i Addis Abeba i juli, gis det også en retning for hvordan dette kan gjøres. Konklusjonen er at alle må gjøre mer, ikke bare myndigheter, men også privat sektor. Vi trenger privat sektor for å få på plass de massive investeringene som må gjøres i mange land, for eksempel til bærekraftig infrastruktur, inkludert energi.

Hvert land har selv hovedansvaret for egen sosial og økonomisk utvikling. Den viktigste finansieringskilden for de fleste land er mobilisering av nasjonale ressurser. Den økte vektleggingen på skatt i Addis-avtalen er positiv. Mange land har stort potensiale for å øke egne ressurser. Norge gjør mye allerede for å støtte opp om en styrking av enkelte lands skattesystem, blant annet gjennom vårt Skatt for utviklings-program.

FN som utviklingsaktør og humanitær aktør, med de mange særorganisasjoner, fond og programmer, er viktig i gjennomføringen av bærekraftsmålene. Samtidig står vi overfor en global flyktningkrise, en humanitær katastrofe som må løses for å nå bærekraftsmålene. Over 60 millioner mennesker er på flukt og FNs evne til å beskytte og oppfylle sitt mandat er satt på prøve. FNs generalsekretær Ban Ki-moon har selv kjent på kroppen hvor viktig FN kan være. Som 6-åring måtte han flykte på grunn av krigen i Korea og han har fortalt om den humanitære bistanden familien mottok fra FN, om skrivesakene han fikk.

FN er sentral i den globale dugnaden vi prøver å få til for å hjelpe mennesker som rømmer fra krig og konflikt. Men hvordan kan vi hjelpe FN til å bli enda bedre til å hjelpe andre? Hvordan kan FN og andre aktører best respondere på nøden? Hvordan kan vi forebygge bedre? Hvordan kan FN jobbe bedre med andre som regionale organisasjoner og Verdensbanken?

Nye trusler mot Norge og verden, som klimautfordringen og terrorisme, kan bare håndteres globalt. Det finnes ikke alternativer til FN. FN er ikke en verdensregjering, men en unik arena for global samhandling. Vi må fortsette det byggearbeidet som ble startet i 1945. Stortingspresident C.J. Hambro, som deltok i arbeidet med utforming av FN-pakten i 1945, inspirerer oss i dette arbeidet; «Den politikk som er i pakt med fremtiden, må gå ut på å gjøre mulig i morgen det som er umulig i dag». Visjonene fra FN-pakten har stått seg i 70 år og gir oss inspirasjon videre.

Tusen takk.

Oppfordrer til rask behandling av søknader

Norge har opplevd en kraftig økning i antall asylsøkere. Dette innebærer at det er nødvendig å opprette nye asylmottak i løpet av svært kort tid. Kommunal- og moderniseringsministeren og justis- og beredskapsministeren sender derfor brev til alle landets kommuner med oppfordring til rask behandling av søknader om etablering av mottak.
I brevet fra kommunal- og moderniseringsminister Jan Tore Sanner (H) og justis- og beredskapsminister Anders Anundsen (FrP) gis det råd og anbefalinger på hvordan kommunene kan bruke handlingsrommet i plan- og bygningsloven og kommuneloven for å sikre rask behandling av søknader om å etablere asylmottak. Det er viktig at vi tar imot asylsøkere på en god og verdig måte. Jeg oppfordrer derfor kommunene til å bruke de mulighetene som regelverket gir dem til å behandle disse sakene raskt, sier kommunal- og moderniseringsminister Jan Tore Sanner.
Siden august har det vært en kraftig økning i antall asylsøkere. Det er foreløpig ingen tegn på at dette er i ferd med å snu. Dette er en svært krevende situasjon.
- Med den store tilstrømmingen av asylsøkere vi har sett til nå, er det viktig med bistand fra kommunene til rask behandling av søknader om etablering av mottak. Dette gjelder både ordinære mottak og mer akutte løsninger. Jeg er glad for at så mange kommuner allerede har strukket seg langt for å hjelpe til med å etablere mottak raskt, sier justis- og beredskapsminister Anders Anundsen.

Nå kan det søkes om barnefattigdomsmidler

Nå kan kommuner, private aktører og frivillige organisasjoner søke på den nasjonale tilskuddsordningen mot barnefattigdom for neste år. Regjeringen foreslår totalt 149 millioner kroner til ordningen i 2016.

- Vi skal sikre at barn og ungdom får mulighet til å delta på viktige sosiale arenaer, uavhengig av inntekten til foreldrene. Tilskuddsordningen gjør det mulig for flere barn og unge å delta i sosiale aktiviteter, sier barne-, likestillings- og inkluderingsminister Solveig Horne. Tilskuddene går blant annet til fritids aktiviteter og ferieopplevelser for barn og ungdom. Det kan være utstyrsbanker, sommerjobbprosjekter, opplevelseskort og ferieleirer. Tilskuddsordningen er foreslått styrket med 8 millioner kroner sammenlignet med saldert budsjett 2015. Ordningen er et av flere tiltak i regjeringens strategi *Barn som lever i fattigdom.*

Hvordan går det med innvandrere i Oslo

Syv bydeler i Oslo er blant områdene med høyest andel innvandrere i landet. Nå har Statistisk sentralbyrå (SSB) sett på innvandrerbefolkningens demografi og levekår i disse bydelene. Funnene foreligger i en ny rapport som ble lagt fram 15. oktober.

Rapporten tar for seg tema som demografi, deltakelse i barnehage, utdanning, arbeid og inntekt blant innvandrerbefolkningen i de ulike bydelene. Den viser at variasjoner i utdanningsnivå, sysselsetting og inntekt skyldes blant annet botid, innvandringsgrunn og landbakgrunn.

Her er de viktigste funnene:

Andelen barn i barnehage i Oslo har økt betydelig siden 2007, og særlig blant minoritetsspråklige barn. I Groruddalen er andelen minoritetsspråklige barn i barnehage så vidt høyere enn for Oslo samlet..

Innvandrerne scorer dårligere enn den øvrige befolkningen på alle dimensjoner innen utdanningssystemet. De som er født i Norge med innvandrerforeldre gjør det bedre, på noen områder går det bedre med dem enn med elever uten innvandrerbakgrunn.

I alle grupper har jenter flere grunnskolepoeng enn gutter. Gjennomstrømningen i videregående skole er langt høyere for jenter enn for gutter, og andelen som studerer blant 19-24 åringene er høyere for kvinner enn for menn.

Sysselsettingsprosenten for dem som er i alderen 25-54 år er høyest for den øvrige befolkningen, høyere også enn for innvandrere fra EU etc. Innvandrere fra Afrika, Asia etc. har mange steder 25 prosentpoeng lavere sysselsetting enn den øvrige befolkningen, og norskfødte med innvandrerforeldre ligger oftest midt mellom. Det er mye større kjønnsforskjeller blant innvandrere enn de andre, og det er også store forskjeller avhengig av opprinnelsesland.

Arbeidsledigheten for innvandrere fra Afrika, Asia etc. er ganske lik i Norge, i Oslo, og i de syv bydelene: Det er fire-fem ganger høyere enn nivået i den øvrige befolkning.

Inntektsnivået er litt lavere for innvandrere fra Afrika, Asia etc. enn fra EU.

Vil bedre levekårene

Oslo kommune og staten har satt i gang tre programmer for å bedre miljø, oppvekst- og levekår i områdene: Groruddalssatsningen, Handlingsprogram Oslo Sør og Områdeløft Tøyen. Et viktig poeng med rapporten er å sammenligne situasjonen i 2013/2014 med slik den var ved oppstart av Groruddalssatsingen og Handlingsprogram Oslo Sør i 2007/2008.

Hjelp mot vold i nære relasjoner-informasjon på flere språk

Hva er vold i nære relasjoner? Hvordan ser man faresignaler, og hvem kan hjelpe dem som er utsatt for vold? Nettstedet hvorlite.no gir svar på disse spørsmål på flere språk.

Dette er en del av en ny informasjonskampanje fra politiet. Kampanjen «Hvor lite skal du finne deg i?» skal gjøre folk mer oppmerksomme på vold i nære relasjoner og bidra til å forebygge denne type vold.

Personer med minoritetsbakgrunn i faresonen

IMDis tall for arbeid mot tvangsekteskap og kjønnslemlestelse viser at trusler og vold er blant hovedkategoriene i henvendelser til Kompetanseteamet og til minoritetsrådgivere.

Kunnskap om hva vold i nære relasjoner er og hvem som kan hjelpe vil ofte være avgjørende for å komme seg ut av et voldelig forhold. Derfor oppfordrer vi alle offentlige instanser å informere om denne kampanjen slik at vi forhindrer at noen blir utsatt for vold, sier Akhtar Chaudhry, leder for forebyggingsseksjonen i IMDi Øst.

På nettstedet **hvorlite.no** finner man informasjon om hva vold i nære relasjoner er, hva politiet kan gjøre for dem som er utsatt for vold, og hvilke andre instanser som kan hjelpe. Informasjonen er oversatt til engelsk, fransk, arabisk, polsk, urdu, somali, farsi, thai og samisk.

For mer informasjon om kampanjen kontakt prosjektleder Raymond Thorsen, politioverbetjent ved Seksjon for seksuallovbrudd i Kripos.

Introduksjonsprogram

Introduksjonsprogrammet skal forberede nyankomne innvandrere til å delta i arbeids- og samfunnslivet, og hjelpe dem til å bli økonomisk selvstendige.

Introduksjonsprogrammet skal minst inneholde opplæring i norsk og samfunnskunnskap, og tiltak som forbereder til videre utdanning eller arbeid. Det er kommunene som har ansvar for å gjennomføre programmet.

Hvorvidt man har rett og plikt til introduksjonsprogram, avhenger av hva slags oppholdstillatelse man har.
Integrerings- og mangfoldsdirektoratet har veilednings- og oppfølgingsansvar overfor kommunene og deres arbeid med introduksjonsprogrammet.

Trygdeavtale mellom Norge og India trådte i kraft 1. januar 2015

Sist oppdatert: 29.01.2015 // Hensikten med en trygdeavtale er blant annet å sørge for at personer som flytter fra et avtaleland til et annet, kan beholde opptjente trygderettigheter, samt å gi dem adgang til trygdeordninger i det landet de flytter til slik at de er sikret kontinuitet i trygdedekningen. Dessuten er det viktig å unngå at denne gruppen må betale trygdeavgift til begge landene.
Avtalen omfatter alle som er eller har vært omfattet av trygdelovgivningen i de to landene, inkludert deres familiemedlemmer og etterlatte.

Det gis regler som bestemmer hvilken av de to landenes trygdelovgivning en person skal være omfattet av. Personer som blir utsendt av sin arbeidsgiver for å arbeide i det andre avtalelandet for inntil 5 år kan etter søknad forbli trygdedekket i hjemlandets trygdeordning.

Det gis videre regler om likebehandling og om fri eksport av visse pensjonsytelser mellom de to landene. Det er imidlertid bestemt at noen pensjoner ikke skal eksporteres, blant annet garantert tilleggspensjon for unge uføre og pensjoner beregnet etter de spesielle bestemmelsene om pensjoner til flyktninger og statsløse.

Avtalen inneholder også regler om sammenlegging av norske og indiske trygdeperioder for å åpne rett til pensjon.

Seljord kommune: speed-dating ble svaret

Gjennom utradisjonell tilnærming og speed-dating fikk 90 prosent av deltakerne i introduksjonsprogrammet i Seljord en arbeidstilknytning. Gode møtesteder mellom næringsliv, befolkning og flyktninger har vært med på å bidra til suksessen.

Tidligere var det utfordrende for kommunen å skaffe nok praksisplasser og tilby et godt helårsprogram for deltakerne. For introdeltakerne var det en utfordring å få nettverk i lokalsamfunnet, kjennskap til arbeidsmarkedet og å skaffe seg jobb.

Seljord kommune utarbeidet et eget undervisningsopplegg i introduksjonsprogrammet med fem moduler. Tiltaket ble igangsatt for å få arbeidsgivere mer på banen, få en mer arbeidsrettet norskundervisning og for å involvere hele kommunen i integreringen av nybosatte flyktninger. Prosjektet skulle også bidra til å skape større bevissthet om flyktninger som arbeidsressurs i lokalsamfunnet, og i møte med lokalearbeidsgivere bevisstgjøre deltakerne på hva som kreves i arbeidslivet.

Resultatet av tiltaket er at 90 prosent av deltakerne ble engasjert i midlertidig engasjement, deltidsstillinger, vikariater eller fikk praksisplass.

Informasjon fra UDI om tap av norsk statsborgerskap

Du har tapt ditt norske statsborgerskap dersom du har fått annet statsborgerskap etter å ha søkt om det, eller uttrykkelig har samtykket til å få statsborgerskapet, for eksempel ved å levere melding.
Dette gjelder også for barn under 18 år (statsborgerloven § 23). Ambassaden oppfordrer alle foreldre som vurderer å søke annet statsborgerskap for seg selv eller sine barn om å sette seg inn i lokal og norsk lovgivning.Ble du norsk ved fødselen, kan du videre tape ditt norske statsborgerskap når du fyller 22 år. Du må melde fra til norske myndigheter og innlevere ditt norske pass dersom du ikke lenger er norsk borger. Mer informasjon om tap av norsk statsborgerskap finnes på utlendingsdirektoratet sine nettsider, www.udi.no .

To dikt av Nuri Røsegg

Grøn vinter

Kulden har slått røtter og rotter seg sammen
Med vinden.
Skjøre solstråler brekker bena på mørke skyer.
Humørsykt regn slår og sparker folk
Fra topp til tå.
Regnbuer dukker opp av medlidenhet.
Kun spøkelsesstjerner danser i den lyse natten.
Langbuksa er lei av å vandre i grønnkollet
Vinterlandskap.
Bikini furter og badebuksa kjefter
Mens hud, pakket inn til siste pore, hyler.
Kun nostalgisk elv lengter tilbake til
Frossen tilstand.
Lekne stener gir usosial sjø et kultursjokk
Vannet er ikke integrert i fellesferien.
En blå sprekk mellom skyene lurer optimister,
Mens pessimister flykter fra Norge
For en dråpe svette.

Hun flyktet hit og kan ikke resirkulere sin flukt
Selv om hun ønsker å være langt unna.
Hun vil ikke dø en grønn vinterdag
Når hennes verden er en svær vaskebøtte og
Hennes drøm utvannes:
Gjøre det folk flest gjør når alt er bra,
Fordi man blir bombardert
Med solstråler.

Hun tviler på at hun noen gang vil føle seg
Hjemme i dette landet
Som lider av gebrokkent vintervær.
Når hun har fått det norske passet
Blir ikke grønt hennes yndlingsfarge.
Så snart hun er medlem av
Denne atypiske vinterklubben
Skal hun reise til sine brunsvidde sletter;
Og med en lydløs latter vise hvor mye
Hun setter pris på pigge fikner.

Lengsel

Mine dagtanker og
Min nattkropp
Elsker deg.
Mine kjærtegn går
Gjennom lysets stillhet
Og mørkets klokke.

Du holder meg våken
Døgn etter døgn.
Min søvn gjør honnør
Til din tomme plass.
Mine rop sprader gjennom
Dagens kulde og nattens feber.

To dikt
Av Inger Marie Lilleengen

Høsten

Høstens farger er en vakker ting! Alle vi mennesker burde med vår hjerne sette sperring rundt dette med en stor ring! Buskenes blader burde vi sette i en ramme. Like fort og vakkert som de skifter farger og faller av, - burde vår medmenneskelig kjærlighetsfølelse være den samme!
Med vår kjærlighet burde vi reagere like fort! Da hadde vi virkelig gjort noe stort. For kjærlighet trenger vi alle! Hvor enn vi hører med i manntallet!

Godta hverandre

Skal vi prøve å ha det godt i lag? Det hjelper på i alle samfunnslag.
Om vi er unge, gamle, har utdannelse eller ei.
Vår omsorg skal vi ikke skuffe vekk i en fei!
Kjærlighet kan nemlig ALLE gi hverandre!
Hvorfor vil enkelte bare klandre? Det er ikke alle som er like sterke psykisk,
Men for det, kan disse ha andre deler ved seg, som er sterkere fysisk.
Kjære venn, - ikke døm din neste så fort! Greier Du la være det har Du virkelig noe stort gjort!
Alle skal vi ikke være like i sinn og skinn! En oppfinnelse av Vår Herre som var fin!

INVITATION

"NRI DIVAS"

4th- 5th January 2016

Dear Friends,

I am pleased to inform you that that the Government of Uttar Pradesh has embarked on an initiative to create a forum for building an effective and meaningful relations with NRI/PIO community from Uttar Pradesh.

As a major step towards that direction, the Government of Uttar Pradesh will be organising its first **"NRI DIVAS" on 4th 5th January 2016, in the beautiful city of AGRA.**

Further to this, I am also pleased to apprise you that the Government has established a full-fledged Department of NRI Affairs with the aims to create an effective and meaningful relationship and provide support and facilitate services for any issues of NRIs/PIOs from UP, their kin or families face at home in the State. Through this department, the government plans to roll out cards certifying NRIs/ PIOs from UP which would entitle the bearer to prompt response whenever she/ he meets a Government functionary in addition to multiple third party benefits.

In addition to all these, the officers of the State Government have been instructed to accord a very high priority to matters that are reported or referred by the NRIs. The website for UPNRI's has already been launched **(www.upnri.com**) by the Department to facilitate NRI's

"**NRI DIVAS"** will be chaired by **Hon'ble Chief Minister, Shri Akhilesh Yadav** who will be accompanied by other state ministers and top government officials.

We request you to kindly block the dates and participate in the event to enhance the relationship between your country and the State of Uttar Pradesh. **Kindly Register on the web-link (http://www.upnri.com/event-registration.htm) for participation in the event. Participation Fees per person for the event is US$ 100.**

A line in confirmation to attend this event will be highly appreciated. This information can be sent to **Ms Kanchan Verma**, Special Secretary NRI Department, Govt. of Uttar Pradesh at **nricellup@gmail.com / jed@udyogbandhu.com**

Yours Sincerely,

Sanjiv Saran
Principal Secretary
NRI Affairs

उत्तर प्रदेश प्रवासी दिवस आगरा में ४ और ५ जनवरी २०१६ को

Kulturnytt सांस्कृतिक समाचार

१४ सितम्बर २०१५ को उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान में पुरस्कार वितरण समारोह के चित्र।

Bilder er fra prisutdelingen ved U. P. Hindi Sansthan i Lucknow i Inida den 14. september 2015.

SPEIL स्पाइल (दर्पण)

Speil støttet med midler fra Norsk Kulturråd
No. 4 2015 Stiftet 1988
अंक ४ २०१५ स्थापित १९८८
ISSN 0802 4448

Adresse पता : **Postbox 31, Veitvet**
0518 Oslo
Norway

Gratulerer. बधाई!

ओस्लो नगर पार्लियामेंट में मारिआने बोरगेन को मेयर और २७ वर्षीय खामशाजिनी गुनारत्नम को डिप्टी मेयर चुना गया।
Vi gratulerer Marianne Borgen (SV), ordfører og Khamshajini Gunaratnam, varaordfører i Oslo.